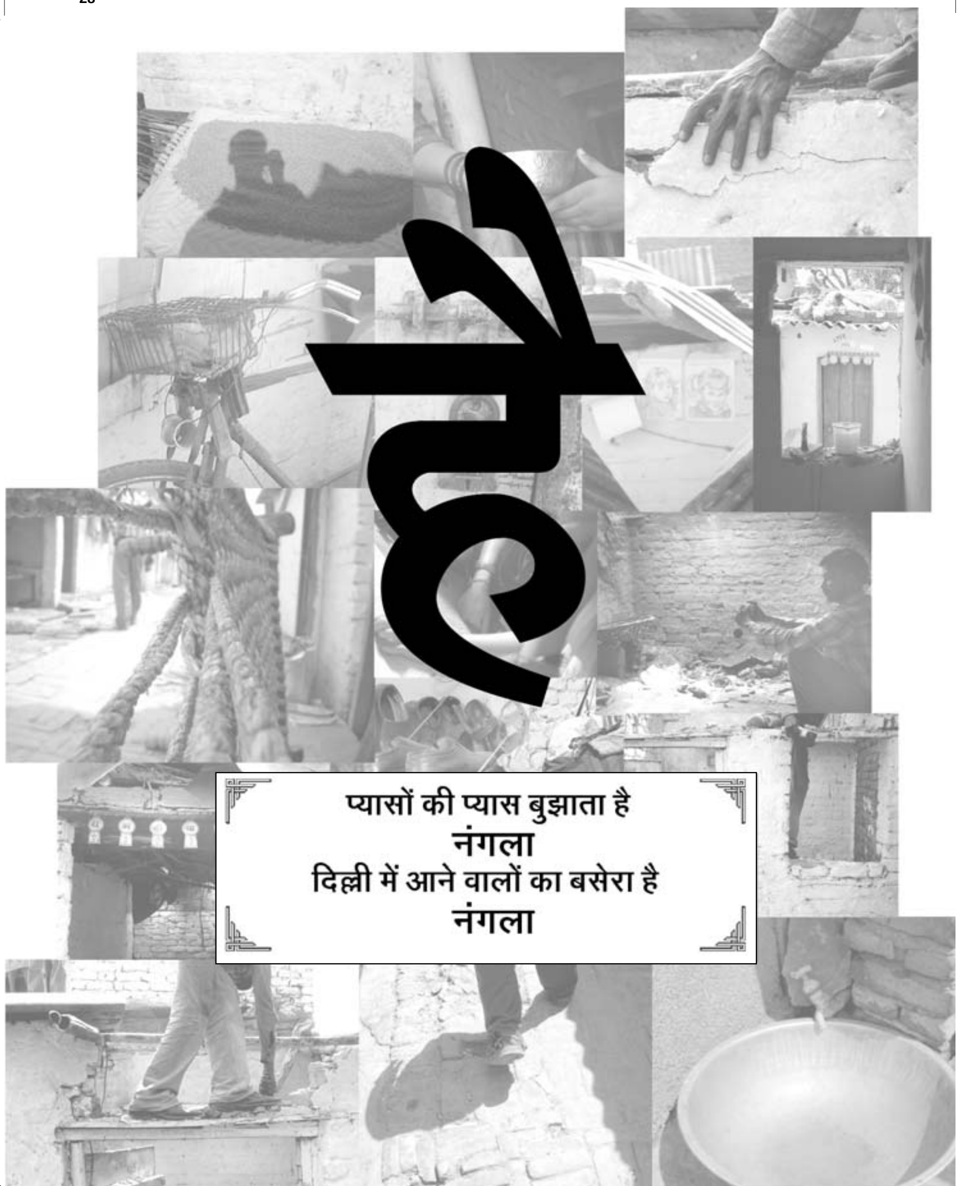





# था




बड़े–बड़े शहरों में कुछ नम बातें
सायबरमोहल्ला (अंकुर+सराय) की पेशकश,
एलएनजेपी, डीपी, नांगला मांची कम्प्यूघर, अप्रेल, 2006

[I]

"सरकार जब किसी को फांसी देती हैं, तो उससे उसकी आखरी इच्छा पूछती है। पर हमसे तो वो भी नहीं पूछा। 'कब-कब' करते करते हमें यहाँ से खदेड़ दिया। बताओ, पहले तो दिवारों पर नम्बर लिख गए, और बाद में उसपर खुद ही पेंट कर के ढक दिया। हम क्या करें?"

[II]

अपने घरों को तोड़ते हुए लोग एक दूसरे में लगे थे:
"ये कब गया यहाँ से ?"
"अरे भैया, कल रात में ही 20 हजार की कमेटी 5 हजार मे उठाई है उसने। टैम्पो करने तक के पैसे भी नहीं थे उसपर। अपने सारे बर्तन भाण्डों को फैला कर उसपर बैठा रो रहा था बेचारा। पूरे 15 हजार के घाटे मे उठाई है कमेटी।"

[III]

दो पीली टोपी वाले बड़े-बड़े हथौड़ों से दबादब दीवारों पर अपनी ताकत आज़मा रहे थे। वहीं छाँव में तख़्त पर बैठे उनके साहब और कर्मचारी हाथों में पेपर लिए पूरी गली मे नज़र घुमाते, और इशारे करते। हर हथौड़े की मार के पास 8-9 लोगों से कम नहीं दिख रहे थे। एक शख्स वहीं पर एक टुक लगाकर, हाथों मे कुछ लपेटे, सामने वाली दीवार से टेक लगाए खड़ा था। पास में आकर किसी ने उससे पूछा, "जिसका घर तोड़ा जा रहा है, वो चले गए?" तो वो कदमों को हिलाते हुए बोला, "कहाँ गया हैं अभी..." और यह कहता हुआ वो आगे की तरफ बढ़ गया। फिर वहीं खड़े एक बंदे ने बताया यह इसी का घर है।

[IV]

चलते-चलते नजर पड़ी तो ज़ुबां से निकला, "हाय देखो! कितना सुंदर घर है!" तो उसी घर मे बड़े-बड़े पत्थरों और बिखरे मिट्टी के ढेर पर बैठे शख्स ने मुड़कर देख और वहीं बैठी औरत ने अपनी आँखो में नमी लाते हुए कहा "अरे भैया, अभी तीन महीने पहले ही तो हमने यह सफेदी कराई थी। मेरी बड़ी लड़की के पसंद का रंग था। बहुत ढूँढ कर लाई थी वो, कि मुझे तोतैया रंग ही चाहिए। और बोलो, अब कैसे बिखर रहे हैं... कहाँ जाएंगे हम? पूरी बस्ती तोड़ दी। नोटिस भी नहीं दिया। सुबह चाय के वक्त पता चला... और बस तोड़ दिया।"

[V]

"ये भी ले जा।"
"क्यों जी, ना ले जाऊं।"
"नहीं, ले जा... हमारा है।"
"अरे तो कैसे लेकर जाएगी? पूरा का पूरा टैम्पो तो भर गया।"
"तो क्या हुआ? मैं न छोड़ने की कुछ भी यहाँ पर, तुम सम्भालो।"
"हटना भाई साहब।"
"अरे सम्भल के हटियो से छोरा! तोड़ तो दिया तुमने, अब बताओ कैसे उठाऊं?"
"अरी देख तो सही, पूरा नाली में गिरा पड़ा है।"
"देखो जी, तुम उठाओ बस।"
"एक तो ये बबलू... ज़रा देखकर तो तोड़! गली में से कोई निकलने वाला भी है।"

[VI]

"क्यों तोड़ रहे हो कर्मजलों, कमीनों! हमें जीते जी क्यों मार रहे हो? अरे तुम्हारी छाती फटे, कीड़े पड़ें! कमीने खुद तो हवा में बैठते हैं, हमे धूप में भी नहीं बैठने देते। बूढ़ी औरत को चुप कराते हुए एक और उसके पास आई और बोलने लगी। "अरे, ये ना सुनेंगे किसी की। पर हम ना जाएंगे यहाँ से। मैं ऐसी ही ना हूँ, जो इनकी मान जाऊँ। मेरे पास पूरे कागज हैं। ये कैसे हाथ लगाते हैं मैं देखती हूँ। मैं हिलाकर रख दूँगी सब को।" इसी तरह गुहार लगाती हुई वो वहीं दरवाज़े से कमर लगाकर बैठ गई। और अपने मैं बड़बड़ाती रही, "मैं ना छोडूंगी घर, मैं न तोड़ने दूँगी, देखती हूँ कैसे हाथ लगाते हैं।" कभी तो उनकी आवाज़ अपने मे ही दबकर रह जाती, तो कभी एकदम से उबाल मारती।









## लाउड स्पीकर

एक आवाज़ मस्जिद के माइक से निकल कर गलियों में छाती है, कानों को छूती हुई बसेरे की अलग से पहचान कराती है। हर जगह मस्जिद हैं। लेकिन यहाँ इन मस्जिदों का तजुर्बा ही दूसरा है। हर शाम एक नई आवाज़ लोगों के ज़हन में समाती है। कभी तो ये आवाज़ लोगों को चौंका-सा देती है। वैसे तो लोग अपना काम करते हुए रहते हैं। लेकिन जिस समय मस्जिद से आवाज़ निकल कर गलियों में आती है, तो कुछ क्षण के लिये लोग थम से जाते हैं। यहाँ तक हाथ का निवाला हाथ में ही रह जाता है। जो मुँह में है वो मुँह में रुक जाता है। कुछ आवाज़ें ऐसी हैं जिन्हें सुन कर लोग ख़ुश हो जाते हैं, तो कुछ लोग घबराए हुए नज़र आते हैं। पर अहसास जो भी हो, कुछ देर के लिये सभी ठहर ज़रूर जाते हैं। जहाँ जिस के कदम होते हैं, वहीं थम से जाते हैं। कुछ आवाज़े तो आम हो चुकीं हैं, पर कुछ ऐसी हैं जो लोगों की भूख, प्यास, छुट्टी भी हर लेतीं हैं।

एक आवाज़ ऐसी है, जिसके आने पर कोई एक परेशान होता है। लेकिन कान सब के खड़े हो जाते हैं। ये आवाज़ है जो सब की जानी-पहचानी सी हो गई है - किसी बचे के खो जाने की आवाज़।

"ध्यान दो! एक बच्चा जो क्रीम कलर का सूट पहने है, जिस के बाल छोटे-छोटे हैं, पैरों में नीले रंग की रूपाली चप्पल है, उम्र लगभग 3 से 5 साल है। बच्चे का नाम दानिश है, पिता का नाम नसरुद्दीन। आप अपने बेटे को पुरानी मस्जिद के पास आकर ले जाएं।"

ये तो था हाल का पता। लेकिन और इस तरह के कई मामले होते हैं, और सामने आते रहते हैं। जब तक खोए लड़के के पापा नहीं मिल जाते तब तक मस्जिद के राजा हाफ़िज़ जी बराबर गुहार लगाते रहते हैं। कहीं कहीं तो अपनी आवाज़ के साथ -साथ बचे के रोने की आवाज़ भी सुनवाते हैं, कि लोग समझ जाएँ किस के बचे की आवाज़ है। कभी उस आवाज़ में "मम्मी", "अम्मी", "पापा", "अब्बू" होता है, तो कहीं सिर्फ़ रोने की ही आवाज़ लोगों के कानों तक आती है।

ये तो हैं शांत आवाज़े, जो हवा की तरह बहती रहतीं हैं, और फिर शांत हो जातीं हैं। लेकिन कुछ आवाज़ें वर्षा की तरह आतीं हैं। जैसे राशन कार्ड और पहचान पत्र की आवाज़ें। ये हल्की रिमझिम बूंदों की तरह लोगों को भिगो देतीं हैं। पहली ही आवाज़ की तरह ये भी गलियों में से गुज़र कर लोगों के ज़हन में बस जातीं हैं। लोग सुबह होते ही मस्जिद के हाफ़िज़ का दिमाग़ खाने लगते हैं कि - "कहाँ बनेगा पहचान पत्र?"

तो हाफ़िज़ साहब सुबह-सुबह प्रधान से सलाह कर के जगह और दूसरी डीटेल्ज़ के साथ अनाउनंसमेंट कर के लोगों को तसल्ली दे देते हैं। लोग अपनी छुट्टी और कामों को छोड़ कर, फ़ॉर्म भर कर जमा करते हैं।

कुछ आवाज़ें तो बिलकुल अंजान होतीं हैं, जैसे कि - "फ़लाँ-फ़लाँ साहब आप जनाब को सुबह से खोज रहे हैं। आप कहीं भी हों, मस्जिद के पास से ले जाएँ।"

इस तरह हाफ़िज़ साहब कई बार नाम ले ले कर पुकारते हैं। इसी तरह छोटी-बड़ी घटनाएँ जब घट जातीं हैं तो इन के बारे में भी आवाज़ मस्जिद से निकल कर आती है। जैसे एक बार एक लड़के का एक्सीडेंट हो गया, तो मस्जिद से आने वाली आवाज़ कुछ इस तरह थी - "एक पंद्रह वर्षीय लड़के का रिंग रोड लाल बत्ती के पास एक्सीडेंट हो गया है। सभी लोग वहाँ मौजूद हो कर उसकी पहचान कर लें।"

यहाँ तक कि सामान के गुम या चोरी होने, और फिर लौटा दिये जाने पर मिल जाने की भी आवाज़ आती है-

"किसी साहबान का बैग गिर गया है। नाम गयासुद्दीन है। बैग में कुछ साढ़े चार सौ रुपये हैं। भाई साहब, आप अपना बैग मस्जिद में आकर ले जाइये, आपकी महरबानी होगी।"

ऐसी आवाज़ों को सुन कर लोग खुद-ब-खुद पहुँचना शुरु कर देते हैं। और बसेरे की एक प्रमुख आवाज़ है - चुनाव में दावेदारों की। जब कोई ताजदार बाबर, वीपी सिंह जैसे नेताओं का आगमन होना होता है तो लोगों तक उस की आवाज़ पहुँच जाती है कि -

"आज इन की रैली है। तमाम बस्ती के लोगों से गुज़ारिश है कि कृपा कर के सभी रोड पर पहुँच जाएँ और गाडी में बैठ जाएँ। आज जंतर मंतर में झुग्गियों के टूटने के प्रति रैली है।"

हर किसी को इस तरह ताज़ी ख़बर मिलती रहती है। कभी तो ऐसा शोर नज़र आता है कि लोगों के ज़ेहन में दर्द सा हो जाता है। कि - "आज बस्ती टूटने वाली है। आज सभी लोग यहीं पर रहें।"

लेकिन आज तो ये आवाज़ भी आम बन चुकी है। अब तो कोई इस पर ग़ौर नहीं करता। लेकिन कुछ तो सहमी-सहमी साँसें लेने लगते हैं। अरे एक अच्छी बात तो मैं भूल ही रहा था, कि -

"आज इन की बारात है। जिन को निमंत्रण है, वो लोग खाना खाने के लिये स्कूल पर पहुँच जाएँ। हाँ, एक बात और! हिंदू भाई भी पहुँच जाएँ। आप के लिये खाने की अलग व्यवस्था की गई है।"

ये भी शाम के वक्त ही सुनाई देता है। फिर एक आवाज़ है, जो हर सुबह की आवाज़ है, कि पढ़ने वाले बचे मस्जिद में आ जाएँ। आज़ान और नमाज़ तो अपने समय से होती ही रहती है। और कुछ पर्वों में तो आवाज़ों की भीड़ ही उमड़ पड़ती है - ईद, बक्र-ईद, मुहर्रम, जुम्मे के दिन...

## "कहाँ?"

मणिलाल अपनी बेटी मीनू का दाखिला कराने शेरशाह स्कूल पहुँचे।
मैडम ने पूछा, "कहाँ रहते हो?"
"नांगलामाँची में," उन्होंने जवाब दिया।
"ये कहाँ है?"
"प्रगति मैदान के पास जो सड़क नौएडा की तरफ जाती है, उसी सड़क पर प्रगति मैदान की लाल बत्ती क्रॉस कर के," वो बोले।
"अच्छा वहाँ, जहाँ पहले कुछ दलदल और झाड़ियाँ थीं? जो झील जैसे बना है? पर वहाँ तो कुछ नहीं है।" टीचर कुछ याद करने की कोशिश करते हुए बोलीं।
"पर अब है, मैडमजी," मणिलाल बोले।

समझाना थोड़ा मुश्किल था। मणिलाल जिस जगह की बात कर रहे थे, वहाँ कोई आता-जाता नहीं था। सामने रिंग रोड थी, जिस पर से सब गुजर जाया करते थे। फिर कुछ चार-पाँच परिवारों ने अपने घर बनाने के लिये मिट्टी डाल-डाल के दलदल की उस ज़मीन के कुछ टुकड़ों का भराव किया। जितना हो पाया, उतना कवर किया। बिना दीवारों के तरपाल की छतें डाल कर कुछ घर बनाए। दिन भर घर के बाहर रहते, और शाम को वापस आते थे। वो अपने आसपास अकेलापन महसूस करते थे। शाम को चारों तरफ अंधेरा रहता था। आसपास के दलदल के बीचों-बीच घरों के अंदर टिमटिमाती बत्तियाँ अंधेरे को और भी गहरा कर देतीं थीं। जब सब सो जाते थे, तो उन के घरों के पास कोई भटकता भी नहीं था। और जब सुबह हो तो दो-चार लोगों को अपने पास बसा हुआ पाना।

मणिलाल भी इन्हीं में से एक थे। उन्हें पता था कि जितना भराव करो, जितनी महनत करो, उतनी ही जगह तुम्हारी। वो थोड़े चालाक थे। उन्होंने काफ़ी सारी जगह का मलबे से भराव कर के अपना बना लिया। शुरू में तो वो अकेले ही थे, पर फिर उन्होंने गाँव से अपने परिवार को बुला लिया। उनके परिवार से पहले उन के जीजा दिल्ली आ गए। दोनों ने मिल कर कुछ प्लान किया, और अपने मन के हिसाब से जगह भर के उस पर अपना घर बनाया। इस के बाद उन्होंने अपने बीवी-बच्चों को भी बुला लिया।

इसी तरह धीरे-धीरे कुछ लोग वहाँ आ कर बस गये। फिर एक माहौल बनना शुरू हुआ – लोगों का सुबह काम पर जाना, शाम को आना, आते वक़्त महारानी बाग, भोगल, आश्रम से घर के लिये सामान लेते आना, घर में खाना पकाना, बच्चों से बातें करना।

ऐसा होते होते ही मणिलाल ने मीनू का स्कूल में दाखिला कराने का सोचा था, और अब उस का दाखिला पहली क्लास में हो भी गया था। मणिलाल मीनू को स्कूल छोड़ने और स्कूल से लेने जाते थे। स्कूल से वापस आते हुए जब वो बस कंडक्टर को कहते कि नांगला का टिकट चाहिये तो वो भी पूछते, "कहाँ का?" तो मणिलाल मैडम को दिया हुआ जवाब उन्हें देते। पर धीरे धीरे बसेरा बनता, बसता, फैलता गया, और उस के साथ साथ उस के बारे में शहर में खबर भी।









## कहाँ जाएंगे, नहीं मालूम

आज हर कोई अपनी धुन मे रमा हुआ है। कोई व्यस्त है, तो कोई सामानों की रखवाली कर रहा है। हर तरफ सामानों का निबटारा और तोड़ना चल रहा है। और जो टूट चुका है, उनमें चुनाई चल रही है। बच्चे कील कबाड़ और कबाड़ चुनकर उनके बदले आइसक्रीम ले रहे हैं। पुलिस और सर्वे वाले इधर-उधर घूमते नज़र आ रहें हैं। कोई जाने की सोच रहा है, तो कोई यहाँ जमावड़ा बनाने की ताक में है - जैसे आइसक्रीम वाला, चने वाले, फल वाले, कबाड़ी और और भी। यहाँ कोई आस के साथ राह ताक रहा है तो कोई चाहत लिए अभी तक अपने घरों मे बैठे हैं। हर कोई किसी ना किसी चाहत को अपनी आँखों मे समाए नजर आ रहें हैं।

कई तरह के शख्सों और माहौलों से आए हुए लोगों से मिलकर एक बस्ती बनती है। मगर टूटने के समय हर कोई एक सा लग रहा है। एक ही तरह का सामान, और एक ही तरह की ख्वाहिशें, जिन्हें समेट कर कहीं और जाने की तैयारी चल रही है। इतना सब होने के बाद भी गलियाँ अपने रंग मे आज भी सलामत हैं। खेलते बच्चे और खाना बनाती औरतें अब भी गली मे दिख रही हैं।

बहुत लोगों ने घरों को खाली कर दिया है, मगर अपनी परछाइयां अपनी दीवारों पर छोड़ गए हैं। हर दीवार उसमें रहने वाले का हाल बता रही है। लोग किस तरह की ज़िद्द और तमन्ना लिए जीते थे, यहाँ वो इस दीवार पर जैसे छप सा गया है। कोई घर कब बना था वो तब पता चलता है जब उसे तोड़ा जाता है। एक-एक चीज़ को साधकर-बाधंकर रखा है, जिसे लेकर वो जाने की तैयारी में हैं। मगर वो कहाँ जाएंगे, वो खुद उन्हें भी नहीं मालूम।

## हवा का रुख

बाबा अपनी कहानी बताने लगे। बोले, "हमने यहाँ पर रिक्शा चलाया। रिक्शा चलाकर अपने घर पर तरह-तरह से अपने परिवार वालों को सुखी रखा। जो एक छोटा सा निजी घर था, वो भी हमसे छीन लिया जा रहा है, कोई बात नहीं। हमारे साथ तो अल्लाह का करम है, तो हम फिर से कहीं ना कहीं ठिकाना बना ही लेंगे। हमारे साथ जो ये कर रहे हैं, उनके बाल-बच्चे ख़ुश नहीं रह सकते। हमारे बच्चे तो फिर भी किसी ना किसी तरह पलकर बड़े हो जाएंगे, पढ़ें या ना पढ़ें। यह तो सब मुकद्दर का खेल है। जो नसीब में लिखा होगा, वो कोई भी नहीं मिटा सकता। हवा कभी रुख नहीं बदल सकती। हमारा अपना रिक्शा जिदांबाद! जहाँ चलाएंगे, हमारा पेट भर जाएगा। किसी से भीख तो नही माँगेंगे"।

## अलविदा

शाम ढल रही थी, चिंता बढ़ रही थी। एक 21 वर्षीय लड़की अपने सामान की हिफ़ाजत के लिए काली पॉलिथिन के नीचे बैठकर इतंजार कर रही थी - उसके मम्मी पापा काले खाँ कमरा देखने के लिए गए हुए थे। पर जब वो वापस आए, तो टाटा 407 की लॉरी को लेकर आए और बोले, "बेटी काले खाँ में तो नहीं मिला, मगर सोनिया विहार में सात-आठ सौ का बढ़िया कमरा मिल गया है। जिसमें कमरा, लैटरीन, किचन, बाथरूम – सब कुछ है"। लड़की खड़ी होकर पानी के डिब्बे में पानी लाई और ड्राइवार, कंडक्टर और माता-पिता के साथ प्यास बुझाकर सामान को गाड़ी पर लोड करके, ख़ुद गाड़ी मे बैठकर आँसुओं को आँखों में लिए, हाथों से अपने बचपन और जवानी के बसेरे को अलविदा कहते हुए, मुँह मोड़कर चली गई।

## ऐसी आज़ादी नहीं चाहिये

मैं इस जगह से भाग रही थी क्योंकि इसमें हमारे कल की गहरी परछाई छुपी है। जिससे हम पीछा नहीं छुड़ा सकते, वो नज़रो के बदलते फ्रेम में हमारा पीछा करती है।

मैंने देखा है लोगों को दायरों से उकसाते हुए, पर आज नांगला को आज़ादी नहीं चाहिए। इतना खुला मैदान नहीं चाहिए जहाँ धड़कते सामानों पर ताश की महफिल उजागर कर सकें। वो बहता हुआ अकेला नल नहीं चाहिए, जहाँ कल तक पानी के लिए बनी लम्बी लाइन में लोग रोज़ की थकान को मिटाते हुए चलते थे।

आज नांगला बिखरे हुए श्रृंगार की तरह है। खूबसूरत पेंटों से सजी दीवारे जहाँ, कल तक मेहन्दी और तेल में हाथ में मलाई थापे दिखाई देते थे, आज वहाँ मनों के हिसाब का हथौड़ा अपनी झुँझलाहट उतार रहा है। हर गली अपनी ख़ास महक से जानी जाती थी, पर आज हवा मे इतनी गर्द है कि खशबुओं को तलाशना भी नामुमकिन है। मगर फिर भी लोग एक दूसरे का सहारा बने ढहती दीवारों के साथ ख़ुद को ढहने नहीं देते। रास्ते पर किसी की साबुत चप्पल छूट गई है, दीवारो पर आधे आटे की थैलियां टंगी हैं, पर शायद किसी को भूख नहीं लगी है। लोग धीरे धीरे करके घरों को छोड़ कर जा रहे हैं। और पीछे छोड़ रहें है दीवारों मे झाँकता समय, मोखलों में अकेली बैठी डिबिया।

जब किसी जगह में बनने की शरुआत होती है, तो लोग थकान से चूर हो जाते हैं - अब ईंटें नहीं हैं, अब गर्डर नही है, अब रोड़ी कम पड़ गई। पर यहाँ, जहाँ जहाँ तक नज़रें जाती हैं ईटे ही ईटे हैं। लोगों के चहरे थोड़े शांत और मुस्कुराहट लिये है। क्योंकि आज उनके मन के डर ने सचाई का रूप ले लिया हैं। पर अब आँखो मे नए बसेरे की तलाश है। साथियो ने एक एक ऐसा पल यहाँ का बताया जो मैंने पहले कभी ना देखा ना सुना। बस्ती टूट रही थी और एक तरफ़ शादी के बाद विदाई चल रही थी। सुनकर मन थोड़ा भसभसाया पर फिर मन में आया कि अगर कोई नई नवेली दुल्हन अपने साथी के साथ यहाँ एक नई दुनिया बसाने आ रही है, जिसे विदाई के समय आशीर्वाद में घर बनाने की हिदायत दी जाती है, वो इस जगह में बसने की क्या कल्पना करेगी ? मैंने एक बार किसी से सुना था कि औरत घर बनाने मे ही रह जाती है, पर आज तो घर ही नहीं रहे... फिर घर के बिना औरत का वजूद क्या ? छोटे-छोटे बचे पतली-पतली गलियों मे बैठे टूटी ईटो के छोटे-छोटे घर बनाकर खेल रहे हैं। धूल में ढकी उनकी पलकें मासूम सपनो को समेंट रहे हैं।

लोगों के चलते अंतर्द्वंद की कसावट मे कुछ लोगों की मौज-मस्ती हल्कापन ला देती है। दीवार पर लगा राधा-कृष्ण का आधा फटा फ़ोटो आज खुली सांस ले रहा है क्योंकि उसके इर्द-गिर्द हवा रोकते 4 कन्धे नहीं हैं। लोग सामान को इधर-उधर उठाकर गुज़र रहे हैं। पर वो मासूमियत से चुपचाप लगा मुस्कुरा रहें हैं। लोग बसेरा छोड़ जाते हैं पर वो अपने पीछे कुछ छोड़ जाते हैं कि वो घर उनके अपने-अपने धर्मों में फँसे होने की दुहाई देते हैं।

जब किसी के यहाँ ज्यादा मेहमान आते हैं तो बर्तनो की कमी हमें एक दूसरे से बतियाने का अवसर देती हैं। पर आज टूटे घरों, उजड़े आँगनों और लुढ़की दीवारों के आस -पास चमकते बर्तन उन अवसरों में जीने की आस लगाए पड़े हैं। ठण्डे चूल्हे गर्म दिमागों की भीड़ में सोए हुए हैं।

कहीं एकदम से हलचल नज़र आती है, खाकी और नीली वर्दी में खड़े लोग एक एक सांस भरते घरों को घेर लेते हैं। और शुरू होती है ...... जिंदा घरों को मुर्दा बनाने की शुरुआत। लोग साबुत हैं ,नज़र आते हैं , पर उनकी टूटने की परछाई टूटे घरों में धूप-छावं की घटती बढ़ती लकीरों में अपना खेल खेलती रहती हैं।

धूम, धड़ाम , खटाक , फटाक, टक, खट कट , साइड हो जाओ , इस घर के मुखियां कहाँ हैं , अरे भैया बस थोड़ी दूर और यहीं बाहर ही ट्रक खड़ा है, अरे घर खाली कर दो रे...

आज नागँला में इन्हीं आवाज़ों का सन्नाटा है।

## सामान का व्यापार

जहाँ पर नाम मात्र के कबाड़ी दिखा करते थे, वो जगह आज कबाड़ ख़रीदने वालों से भरी है। यहाँ आज वो भी कबाडी बन गए हैं जो पहले कपड़ो का व्यापार करते थे। आज सभी कबाड़ी बनकर आवाज़ें मारते हुए ऐसे घूम रहे हैं मानो गलियाँ उन्हें पहचानती न हों। वो आवाज़ लगाते हैं, "कबाड़ी-कबाड़ी"। लोग अपना सामान हल्का करने के लिए, और ये सोच कर कि उन का पीछे छोड़ा गया सामान बरबाद न हो जाए, उसे सस्ता ही इन लोगों को बेच रहे हैं। ये लोग लोहा 15 रुपये में ना लेकर 10 में ख़रीद रहे हैं। आज उनकी आवाज़ में गरज नहीं। अपने मन को तसल्ली दे रहे हैं कि मलबा रखने से क्या फ़ायदा? जगह तो मिलेगी ही नहीं, किसके कमरे मे रखेंगे? ये जानते हुए सब "कबाड़ी" अपने-अपने कंधों पर जूट के बोरे और तराज़ू लेकर घूम रहे हैं।









## शनिवार

तमन्ना की नींद टूटी। वो अपने हसीन बेड से लिपटे बिस्तर को छोड़कर जागती हुई, अपनी पलकों को धीरे-धीरे खोलती हुई, शरीर को टाइट करते हुए उठी। बिस्तर को ओढ़े हुए हल्के गुलाबी रंग के पर्दे को हटा कर उसने दरवाज़ा खोला और सामने लगे दर्पण में देखा। अपना चेहरा देखते हुए, बालों पर हाथ मारा और यकायक कुछ सोच कर उस के चेहरे पर हल्की सी मुस्कान खिलखिलाई। वो मुड़ी और साहिल के बिस्तर के पास गई, उस के सिरहाने पर बैठ गई। चादर के नीचे से साहिल का चेहरा झांक रहा था - आँखें बंद, किसी गहरे सपने में खोई हुई एकदम शांत लग रहीं थीं। बाल तकिये से चिपके हुए बिखरे-बिखरे हो रहे थे। तमन्ना ने चादर थोड़ी नीचे सरकाई और उस के गाल पर एक हल्का सा किस दिया। तो साहिल ने थोड़ा हिलते हुए अपनी बाहें फैलाई और तमन्ना के गले में डाल दीं। तमन्ना ने अपनी मुलायम हथेली से उस के हाथ को सहलाया, और आँखें मटकाते हुए, कमर के झटके के साथ उठी और बिस्तर से दूर हट गई। उस के दूर होते ही साहिल ने बनावटी रूठने की "हम्म्म" की आवाज़ निकाल कर चादर खींच कर अपना चेहरा ढक लिया।

फिर क्या, रोज़ की तरह तमन्ना घर से निकल कर, दरवाज़ा बंद करते हुए पुश्ते पर बने शौचालय की तरफ़ चल दी। वो रोज़ सुबह जल्दी ही जाती, वहाँ भीड़ लगने से पहले। वहाँ उसी की तरह एक-दो औरतें उसे दिखतीं, जो प्लास्टिक के गैलन में पानी भर के उसी के साथ अलग-अलग डब्बा रूपी शौचालयों में दाख़िल हो जातीं। फिर बाहर निकल के, वहीं बने नल और साथ में रखे साबुन से हाथ-मुँह धोतीं, और शौचालय की देखभाल करती औरत को एक रुपया दे कर अपने घरों की तरफ़ रवाना हो जातीं।

तमन्ना भी अब घर की तरफ़ चल दी। अब तक कुछ और औरतें और आदमी भी नज़र आने लगे थे। सब बोतलें या डिब्बे लिये हुए थे। कुछ तो उसी शौचालय की तरफ़, और कुछ यमुना के मैदान की तरफ़ जा रहे थे। सभी रात में जिस में सोते हैं, उन्हीं कपड़ों में थे, या फिर कुछ पहन कर अपनी शरीर को ढाँक लिया था। आदमियों में किसी ने तो सिर्फ़ तहमक ही लपेटी हुई थी, तो कोई-कोई निकर और बनियान, और पैरों में रूपानी चप्पल पहने नज़र आ रहे थे। सभी के बाल सो कर अभी उठे होने से अलग-अलग आकार लिये हुए थे। तमन्ना ने मन में सोचा, मज़ा आए अगर किसी दिन रुक कर बालों के आकार के हिसाब से सब को नाम दूँ! पर अभी तो वो रुकी नहीं। उसे घर जा कर खाना बनाना है, पति को गर्म चाय दे कर उठाना है और बच्चों को स्कूल भेजना है। ये सोच कर तमन्ना जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हुए वापस घर की तरफ़ हो ली।

## महकती गलियाँ

गलियों में महक को बिखेरने वाले आते हैं। वह हैं कन्नौज से आने वाले सेन्ट विक्रेता, जो दो-दो के ग्रुप के रूप में नज़र आते हैं। जिनकी आवाज़ होती है, "चमेली का, रातरानी का सेन्ट लो" और कुछ इतरो का नाम लेते हैं और अपनी छोटे से सूट केस को खोल कर बैठ जाते हैं। फिर गली की महिलायें या पुरुषों की बाहों में सेन्ट को रगड़ देते हैं। यदि महक पसन्द आ जाती है, तो वो ले लेते हैं, नहीं लेते तो ये और कई तरह से ग्रहकों को लुभाते हैं। ये लो चावल का तेल , ये लो कस्तूरी की महक का तेल। इतरों का फूंहा मार मार कर गलियो को महका देते हैं। गलियाँ ख़ुश होकर लोगो को सेन्ट लेने पर मजबूर कर देतीं हैं।

## वैसे तो उनका नाम नसरूद्दीन है

रात भर फुर्सत से खड़ी रहती हूँ एक कोने पर दिवाल के सहारे। ना बोल सकती हूँ ना कुछ कर सकती हूँ। मुझे तो एक साथी की तलाश रहती है। आख़िरकार मैं हूँ एक साइकल, और एक साइकल सवार मेरे साथी हैं, जिन का रंग गोरा, गाल बालों से ढके हैं। डाढ़ी भी बालों से भरी है। उन्हें लोग प्यार से मुल्ला जी कहते हैं। वैसे तो उनका नाम नसुरूद्दीन है। ये सुबह वही नौ बजे या फिर साढे नौ तक हमारे पास आते हैं, बिना किसी झिझक के मेरे पैरों की ज़ंज़ीर से लगे ताले को खोल कर मुझे उस कोने से हटा कर एक रूमाली कपड़े से साफ़ करके मेरी गद्दी के नीचे उस रूमाली कपड़े को रख कर गद्दी पर हाथ को मारते हुए, मेरे हाथों को पकड़ कर, मेरे साथ पैदल चल कर, रिंग रोड पर पहुँच कर, मेरे ऊपर बैठ कर, गानों को गाते हुए चलते है।

## सभी ने सुना होगा

गलियों में फेरी वालों की आवाज़ें कतई बन्द नहीं होती। शाम चार बजे तक तरह-तरह की आवाज़ें आतीं हैं, जिन का मार्किट से कोई लेना-देना नहीं होता। आओ सुनते हैं। सभी ने सुना होगा, तो क्या हुआ? आज पढ़ लेते हैं। एक लड़का, जिसकी उम्र बाईस या चौबिस साल है , जो अपने झोले में लेडीज़ या जेन्टस के लिए एक तोहफ़ा, यानि शमीज़-कच्छा रखता है। एक हाथ पर लेडिज की शमीज, दूसरे हाथ पर उन्हीं की कच्छा लिए रहता है। उसकी आवाज़ को सुनकर लेडिज़ों की टोली उसे घेर लेती है और उसको घेरते हुए अपने लिये कुछ खरीद लेतीं हैं। तो कभी तो वो केवल आवाज़ को मार कर निकल जाता है नंगला की गलियो से ...

## एक बाबा

मदमस्त बहती ठण्डी हवा की नोंक-झोंक को चीरते हुए एक रिक्शा टाईप की गाड़ी, जो दूध वाली गाड़ी के नाम से जानी जाती है। इस गाड़ी को चलाता हुआ एक लड़का इसे पुश्ता पर खड़ा करके, मदर डेरी का दूध बेचता है। लेकिन एक बाबा जो नांगला गाँव से गाय और भैंस का गरम दूध लाकर गली में आवाज़ मरते हैं और दरवाज़े पर आकर दूध देते हैं और बोलते हैं, "फेना मारकर ताज़ा दूध ले जाओ! कीमत कोई ज्यादा नहीं! बनली बीस रूपये! आज नहीं है तो कल दे, कल भी नहीं तो महिने में दे।" इस तरह वो दूध बेच कर अपने नांगला गाँव को चले जाते हैं।

## चाय की दुकान

मोटी-तगडी, भारी-भरकम शरीर वाली औरत, जो अपने पीछे वाले गेट से चाय की दुकान चलातीं हैं। वह चाय के ब्रेड पकौड़े इत्यादि चीज़ें बनाती है। इनके पति का देहान्त हो गया है। इनकी दो लड़कियाँ, तीन लड़के हैं, जिनमें से बड़ा वाला बेटा अपनी कमाई घर पर नहीं देता। लेकिन ये महिला अपनी रोज़ी-रोटी ख़ुद ही कमातीं हैं। उन की दुकान उन के कमाने का एक सहारा है। माह के अंत मे इनको पेनशन भी मिल जाती है।

## जलती बीड़ी

निकलती सुबह की बहती मौसमी हवाओं के रुख के साथ मैंने अपने बिस्तर को छोड़कर, दरवाज़े की सांसों से निकलते प्रकाश को देख कर, हाथों से दरवाज़े को खोलकर, बाहर झाँका तो मेरी नज़र एक ऐसे चेहरे पर पड़ी जिसने जलती बीड़ी को अपने लबों से लगा रखा था, जिसमें से छल्लेदार धुआँ निकल रहा था। वो पानी को गिलन में भरते हुए शौच जाने की तय्यारी में है। अब शौच हो कर आ भी गया है, पर बीड़ी हमेशा लबों से लगी है। वो हर सुबह अपनी ढाड़ी को बनाते हैं, शीशे में अपने चेहरे को देखते हुए। फिर खाना बना कर, खा कर साईकिल के डण्डे मे टिफिन को बाँध कर साईकिल को एक हाथ से पकड़ कर चलते हैं। दूसरे हाथ से सिगरेट को पीते हुए अपने काम पर निकल जाते है।

## वो किसी से कुछ बोलतीं नहीं

रंग सांवला, बिखरे बाल, ढीली चमड़ी, लचीला बदन जो हमेशा झुका-झुका रहता है। ये महिला बस्ती में बिलकुल अलग नजर आतीं हैं। इनके कपड़े कुछ मटमैले कलर के हैं, हाँथो पर कुछ न कुछ लिए रहतीं हैं। एक कुत्ता भी कभी कभी उनके पीछे -पीछे लगा रहता है। इनको शायद देवी नगर के लोग जानते हैं। वो किसी से कुछ बोलतीं नहीं। उनकी पहचान उनके लड़के जॉन के नाम से की जाती है। जॉन बस्ती का सबसे निराला लड़का है, जो अपने शरीर को बदलता रहता है, कलात्मक ढंग से अपने शरीर को सजा कर रखता है। लेकिन माँ हमेशा एक हुलिये में ही नज़र आतीं हैं।

## लकड़ियों का गट्ठा

मुकरता हुआ दिन गायब हो रहा था, लहराती शाम का आगमन हो रहा था। सूरज लाल हो रहा था, चंदरमाँ जवानी के रूप में सफ़ेदी बढ़ा रहा था। उधर प्रगति मैदान में काम करने वाले लकड़ियों का गट्ठा बना कर, सर पर लादे, चले आ रहे थे। दो बाबा थे, करीबन 55 साल के, और उन के साथ दो बूढ़ी माई थीं। चारों ने अपनी धोतियाँ टाँगों के बीच से बाँधी हुई थीं। चलने से लग रहा था कि सर पर लकड़ियों का बोझ भारी पड़ रहा था। नांगला में घुसते ही वो सब की आकर्षण का केंद्र बन गए।

व्यापारियों ने उन्हें घेर लिया। एक नहीं, कई थे। लकड़ियों का गट्ठा उतार कर घेरे के बीच रख लिया गया।
"कितने का दोगे बाबा?" किसी ने पूछा।
"300 रुपये," जवाब मिला।
व्यापारी तरह तरह की बोलियाँ लगाने लगे - "सौ", "दो सौ", "ढाई सौ में दे वरना लकड़ियाँ उठा कर भाग जा"।
तभी बूढ़ी माई चलने को हुईं।

सब्ज़ी वाला बोला, "चलो छोड़ो। लो 300 रुपये।"
चारों ने अपना सर हल्का पाकर पैसों की तरफ हाथ बढ़ाया।
सब्ज़ी वाला बोला, "चलो, सही से यहाँ रख दो।"
इतने में दूसरा बोला, "बाबा चार सौ रुपये ले लो, मुझे दे दो।"
बाबा रुकते हुए बोले, "अब तो बिक गई। बात की बात होती है।"
"तो क्या हुआ बाबा? मैं तो चार सौ दे रहा हूँ।"
सब्ज़ी वाले ने "नहीं" कहते हुए फ़टाफ़ट तीन सौ रुपये बाबा को थमाए और लकड़ी अपने कब्ज़े में कर ली।

अब चारों क़दम से क़दम मिलाते हुए अपनी गली को पहचानते हुए, अपने शरीर को मोड़ते हुए नदारद हो गए। फिर क्या? कुछ तो सोचते रह गए। सब्ज़ी वाले ने अपनी कमी पूरी कर ली।

## रिंग रोड

रिंग रोड, जो गोल और काफी बड़ा है। उसी रोड पर एक सफ़ेद, लम्बी गाड़ी, जिसका नम्बर डीएल 3 सी 4462 था। जो एक अपनी स्पीड से आ रही थी। कि अचानक गाड़ी के सामने एक बुज़ुर्ग आया, जो उस गाड़ी के आगे-आगे गुलाह्टी खेलता जाता। गाड़ी पीछे-पिछे चलती जाती। फिर अचानक गाड़ी रूक कर खड़ी हो गयी। बुज़ुर्ग कांपता हुआ खड़ा हुआ और अपनी लूंगी को उठा कर देखा तो उसके पैर से ख़ून निकल रहा था। वह घबरा गया। इतने में उसका बेटा पीछे से आया और गाली देते हुऐ बोला, "साले अन्धे बनकर चलाते हैं।" अपने पिता को लेकर वो डॉकटर के पास चला गया।









## खाली घर

खाली घर तो भूतों का बसेरा होता है... लोगों से भरा बसेरा तो उजड़ चुका है। जो बचा है, वो उजड़ने वाला है। खोज-खोज कर खण्डहर बना दिया है इसे। यहाँ तक कि निशान भी छीनने की कोशिश की जा रही है। लेकिन निशान कौन छीन सकता है! निशान के ऊपर निशान बनते जाते हैं। आज नाँगला माँची बिना उजाले की आस के अंधेरे में जी रहा है। पानी तो अभी भी बह रहा है, उसे पीने वाला चाहिए। चलो चिड़ियाँ और बचे- कुचे लोग तो पी रहे हैं! नालियां जाम हो गई हैं। मलबा उठाने वालों ने अभी भी अपनी रेहड़ियो पर ताला लगा रखा है।

## हम तो यहाँ से चले जाएगें

लोगों ने अपने अदंर भराव कर लिया यह सोचकर कि हमे वक्त मिल गया अपना बंदोबस्त करने के लिए। तभी लोगो मे तसल्ली नज़र आ रही है। मगर इन्होंने सोच लिया है कि इन्हें कोई यहाँ रहने नहीं देगा। हालात में झूझते झूझते यह अपने रोजमर्रा को दिखा रहे हैं। तभी तो दोबारा से चूल्हे जलने शुरू हो गए, ये सोचते हुए कि कुछ पल और साथ दे हमारा बसेरा।

कुछ लोग कहते हैं हमारी बस्ती रुक गई पर दूसरे पल कोई कहता है कि नहीं, बस्ती तो टूटेगी। पर जिसके पास मकान के पक्के कागज़ात हैं उसके लिए आसानी है। तभी तो एसे हालात मे भी कुछ लोग कमाने की सोच रहे हैं। कोई परचून की दुकान खोलता है तो कोई सब्जी की, और गोश्त की तो घर में ही खोल ली। इस मंजर से लोगों ने अपना कुछ वसूल करने के लिए महंगाई कर दी - हर चीज़ पर पैसा ज़्यादा, लगता है ये लोग भी जो अपने हैं यह हमसे सामान लाने का टैक्स ले रहे हैं।

आज नाँगला बहुत शांत है। कुछ तोड़ने-टूटने की आवाज़ भी दूर-दूर तक नहीं आ रही है। एक बच्ची जो झुंड में बैठे बच्चों से बात कर रही थी:

"हम तो यहाँ से चले जाएगें। हमारा तो नया स्कूल होगा ,और पापा ने भी कहा मुझे नया पेन दिलाने के लिए। मगर मैं कहाँ खेलूगी? तुम सब मेरे घर आना खेलने के लिए। मैं तुम्हे गोलियाँ दूंगी।"
तो दूसरी बच्ची ने कहा, "तू तो कहीं ना देती!"
तो पहली बच्ची हाथ मे कटोरा लिए बोली, "देख मैने तुझे पानी पिलाया ना आज। मेरे घर आएगी ना, गोली दूँगी।" तो तीसरा लड़का बोला, "अरे झूमरी, तू कॉं कू जाएगी। सब अपने अपने घर जाएगें बहुत दूर-दूर।"
एक बच्ची बोली, "अच्छा अभी तो नकुल का घर टूटा है अब किसी का ना टूटेगा मम्मी कह रही थी। हमारा घर ना टूटेगा , मैं स्कूल जाउगीं सब अच्छा अच्छा घर बनवाएगें। मेरे स्कूल के कपड़े खराब हो गए, अब तो मेरे नए कपड़े बनेंगे।"

मैं थोड़ी दूरी पर इनकी बातें सुन रही थी। तो मेरे पीछे से एक 17 साल का लड़का बोला, "नुकसान हमारा और तमाशा देखे कोई और।" बस मैं वहाँ से चली गई। मुझे मालूम है लोगों के दिलों मे बहुत ठेस पहुँची है। अब तो उनकी गाली भी बुरी नहीं लगती। अब जब भी मुझे कोई कुछ कहता तो लगता कि अगर मैं इनकी जगह होती तो शायद एसा ही कहती।

कुछ आवाज़ें कानों को पड़तीं, कि आजकल में ये लोग नल का पानी भी काट देंगे। पहले बिजली, अब पानी का नम्बर है। जब यहाँ पानी ,बत्ती ना होगी तो लोगों का गुज़ारा कैसे चलेगा ? हमें भगाने के लिए सरकारी आदमी कुछ भी करेंगे।"

मंदिर की दीवार से लगी कुछ औरतें आपस मे बातें कर रहीं थीं, धीमी सी आवाज मे :
"अगर यह बस्ती मेरे बस मे होती तो मैं यह बस्ती इन लोगो को दान मे दे देती। बेचारे लोग कहाँ जाएगें ? किसी का ठिकाना है भी या नहीं।"
उनमें से दूसरी बोली, "औए चुप हो जा , दानी कहीं की! अगर तेरे अडंर मे यह झुग्गी होती तो तू यहाँ ना होती! और बड़ा दान करने की सोचती है , बेटा पैसा ऐसी चीज़ है जिसे जितना छुपाओ तो उतना आता है, और तेरे पास पैसे आएंगे तो तू बदल जाएगी।" वो हल्की सी हँसी लेकर बोली, "तुझे कुछ मालुम है यहाँ कुछ लड़कियो की शादी होने वाली है। जब भी हमारे पास से कोई गुज़रता या हम उनके सामने जाते तो कुछ ना कुछ बड़बड़ाते हैं। ये लोग अदंर से जले हुए हैं।"
दूसरी बोली : "तो इनको यह तो मालूम होना चाहिए कि ये तो हमारी नौकरी है जो सरकार बोलेगी हम वही करेंगे।"

इन लोगों में जो बात हो रही थी वो मस्ती के अंदाज़ में हो रही थी। उनके चेहरे पर बोरियत नज़र आ रही थी। और ये थक गए थे कटी जली सुनते सुनते।

सब एक दूसरे से बिछड़ रहे हैं, इसलिए सब एक दूसरे के पास जाकर हालचाल पूछते और नई जगह का कोन्टेक्ट नम्बर मागँते। और बोलते कि पता नहीं मुलाकात होगी भी या नही। आज भी औरतों के झुडं दरवाज़ो के बाहर नज़र आए। जो कुछ ना कुछ फुसफुसा रही थी। अब शायद ये जो बचे हुए पल हैं, उन्हीं को अपने साथियों के साथ हँसी खुशी बिताना चाहती हैं। तभी तो नल पर या गली पर बचो की छोटी छोटी भूल पर जो लड़ाइयां अक्सर पाई जाती हैं, आज वो यहाँ खो गई हैं। तभी तो लड़ाई झगड़ा नही है आपस में। पर जिसकी वजह से बस्ती उठी, उससे सब मे गुस्सा है।

## बुनियाद खिसक रही है

बसेरे में बनती कहानियां और बनते अनुभवों को भला कैसे तोल या नकार सकते हैं? जहाँ ज़िंदगियां, रिश्ते और फ़ैसले बनते-बिगड़ते रहते हैं। कुछ नम अहसास हैं जो बसेरे की गलियों, मोहल्लो मे पनपते हैं। एसे ही एक कहानी नाँगला मे पिछले कई महीनों से रचती चलती आ रही है। पिछले दिनों से नाँगला में सर्वे होते चले आ रहे हैं। एक ही दिन बस्ती में कुछ-कुछ दूरी पर लोगों के झुंड लगे थे ।और उनके बीच एक साहब मोटा शरीर, पैन्ट कमीज पहना हुआ, हाथों में फ़ाइल लिए था। आसपास लोगों का घेरा लगा हुआ था। जगह जगह ऐसा नज़ारा था। लोग अपने साथ मे राशन कार्ड या प्रमाण पत्र या अन्य आवासीय कागज़ात हाथों में लिए खड़े थे।

सभी अपने प्रूफ़ दिखा रहे थे। और साहब उनके प्रूफ़ और रेसिडेन्शि प्रूफ़ नोट किए जा रहे थे। सभी की आँखो मे चाहत थी कुछ पाने की। कोई कहता कि वो 15 साल से, तो कोई 20 से नांगला में रह रहा है, ये बताता। कोई कहता, "यह देखिए हमारा राशन कार्ड। यह सन 90 का है"। जैसे तैसे उनके घर में जो प्रूफ़ मिलता, वो लाकर दिखा रहे थे।

हर किसी के अपने अपने सवाल थे। बस्ती टूटने से जगह मिलने तक को लेकर :
बस्ती कब टूटेगी ?
क्या हमें जगह मिलेगी ?
जगह कहाँ मिलेगी ?
बचों के पेपर हो जाने दो, फिर चाहे जो करना।

कुछ इस तरह की बातों का जाल साहब के आगे बुन रहे थे। पर साहब कह रहे थे, "हमें नहीं पता। हमे तो सिर्फ़ सर्वे करने से मतलब है। हमे भेजा भी इसीलिए है"। साहब तो बस अपना काम किए जा रहे थे। और काम की ही नज़रो से देख भी रहे थे। उन्हें क्या पता इस जगह मे कोई सपने इच्छा संजो कर रखे हैं, जिन्हे अभी पूरा करना हैं।

जितने मुँह, उतनी बातें। कई दिनों से लोगों के मुँह से भी बाते सुनने मे आ रही थी कि बस्ती टूटेगी, पर ये ख़बर मानो एक लतीफ़े का रूप ले चुकी थी। लोग बेफ़िक्र होकर इस ख़बर को ना जाने कितने सालों से सुनते आ रहे थे। कह रहे थे कि पिछले साल भी सर्वे हुए थे पर कुछ नहीं हुआ। और इस बार भी कुछ नहीं होगा। यह सब ड्रामा है। इतनी बड़ी बस्ती को इतनी आसानी से कैसे तोड़ सकते हैं ये लोग। अरे यह तो रोज़ाना की बात है, कोई नई बात बताओ। बस इस तरह की बातों से कुछ पल के लिए लोगों में उबाल आता और फिर सब कुछ पहले जैसा हो जाता।

सामने घर में मामू झाड़ू लगा रहे हैं। मामू तकरीबन 60 साल के बुज़ुर्ग हैं। कई सालों से यहीं रह रहे हैं। वो जब अपने घर का दरवाज़ा खोलते हैं तो दरवाज़ा खोलने से पहले ही पड़ोसी के यहाँ से उनकी चाय आ जाती है। हमेशा अपने दरवाज़े पर ही बैठे रहते हैं और घर से बाहर दूसरी गली में भी जाते हैं तो अपने घर को ताला लगाकर जाते हैं। इस बात से आस पड़ोस के लोग हमेशा से ही नाराज़ रहते हैं। उन्हे लगता है कि कोई उनकी चीजों मे छेड़खानी ना करें। उन्हें अपनी चीज़ो को चोरी होन से बहुत डर लगता है। हमेशा कुर्ता-पायजामा ही पहनते हैं। सर पर एक स्वापी ही बाँधते हैं। बहुत कम लोगों ने इनका सर देखा है। शरीर पतला ,हाथ पैर मे बहुत कम ताकत। मामू बड़े सफ़ाई पसंद इसांन हैं, इसलिए हमेशा इनके हाथों मे झाड़ू रहती है। और ये मोहल्ले की गलियों मे झाड़ू लगाते रहते हैं।

जब वो गली मे झाड़ू लगाते हैं तो उस समय बचे खूब चीखते चिलचलाते हैं उधम मचाते हैं। तो इन्हे बड़ा गुस्सा आता है और गुस्से मे वो बहुत कुछ कह जातव हैं इस बात से बचे इन्हे छेड़े ही रहते हैं। बाद मे वो बचो को मारते हैं। कोई उन्हे सलाम करता है तो वो उसका जवाब बड़े प्यार से देते हैं पर जवाब मिलने के बाद भी कोई दोबारा सलाम करते हैं तो इसपर वह खिसया जाते हैं। ये अपने घर में कभी खाना नहीं बनाते और ना ही बाज़ार से लाते हैं। इनका खाना हमेशा ही आस पड़ोस से आ जाता है।

इनका आये दिन आस पड़ोस से झगड़ा तो होता ही रहता है, पर फिर भी लोग इनकी बहुत इज़्ज़त करते हैं, और इन्हें अपने घर का ही एक सदस्य मानते हैं। इनका किसी से रिश्ता ना होकर भी सबसे बहुत गहरा रिश्ता है। नाम तो इनका मुश्तियाक है पर सभी छोटे बड़े इन्हें मामू कहकर पुकारते हैं। इनकी ज़िंदगी के कई साल यहीं गुज़रे है पर आज तो ना जाने कल कहाँ जाएंगे। आज पिछले 30 सालों से बनी बुनियाद खिसक रही है और इस बिखराव में एक जगह उसके दिखने का समय बदल रहा है।

## समय का वज़न

समय का एक बहुत भारी वज़न होता है, जिसे लोग अपने साथ मे लेकर चलते हैं। जैसे चलते-चलते बीच में एक आदमी ने हमें रुकया। उसका चेहरा पसीने मे तर-बतर था। और भारी समानों को उठाने से जो सांस फूलती है, कपड़े मटमैले होते हैं, वो ऐसा नज़र आ रहा था। उसने हमसे कहा: "सुनिये मैडम, क्या हमारी भी झुग्गी टूटेगी?" हमें कुछ समझ में नहीं आया। हम ने पूछा, "जी क्या?" उस ने अपना सवाल दोबारा पूछा। फिर वो बोला, "हमारे पास तो कुछ नही! हमारा राशन कार्ड ही है, जो सन 90 का बना है"।

लोगों की बातचीत में ये बहुत उभरता है कि "हमने बसाया है इस जगह को। जब हम यहाँ आये तो कुछ भी नही था यहां पर! हमें यहा आये इतने साल हो गये है।" यहां की दीवारें, जिनपर दुकानों के नाम लिखे हैं। टेलर की दुकान, एसटीडी, ब्यूटी पार्लर आदि। दीवारों और चौखट पर हुई सजावट, जिसे बड़े प्यार से सजाया और लिखा गया होगा। आज लोग उस प्यार और समय को अपने साथ में नहीं ले जा सकते, पर दरवाज़ों और शटरों को तो निकाल ही सकते हैं, ले जा सकते हैं। तो हथौड़ी की आवाज़ें लगातार आ रहीं हैं, पर कुछ कुछ दूरी पर।









## बंटी

जब मैंने उस सत्रह साल के लड़के को बसेरे में पहली बार देखा तब सुबह का वक्त था। वो दिखने में थोड़ा सा काला था, और उस का एक हाथ और एक पैर थोड़ा कमज़ोर थे। उस ने सफ़ेद शर्ट और काली पैंट पहनी थी, और उस की पैंट की एक जेब में गिलास और दूसरी में एक पेन था। वो रास्ते से चला जा रहा था, लोगों को सलाम-नमस्ते करता हुआ। कुछ बचे उस के पीछे लगे थे और उसे पागल-पागल कह रहे थे। उस समय उसे देख कर उस के बारे में मुझे कुछ समझ नहीं आया था।

धीरे-धीरे उस ने उस ने अपनी बातचीत, रहन-सहन और अदाओं से बसेरे के लोगों के दिल में जगह बना ली। वो बसेरे में अजनबी की तरह घूमता रहता। कभी यहाँ, तो कभी वहाँ। लोग उसे जहाँ भी देखते, उसे से कहते, "बंटी बेटा खाना खाएगा?" तो वो कहता, "नहीं दीदी, अभी उन अम्मा ने खिला दिया।" बचे उसे छेड़ते और उस के साथ मज़े भी करते। जब वो बचों से ज्यादा परेशान हो जाता तो आसपास चल रहे किसी भी कुत्ते को उठा लेता और बचों को डराने के लिये उन की तरफ़ उसे करता। पर उस का एक हाथ कमज़ोर होने की वजह से वो उस के हाथ से छूट जाता, और बचे डर के भाग जाते। बंटी को कुत्तों से लगाव था। वो ऐसे भी अकसर किसी छोटे से कुत्ते को अपने साथ रखता। रात में वो किसी भी चबूतरे पर सो जाता, और सोने से पहले कुत्ते को चबूरे के आसपास कहीं रस्सी से बाँध देता। फिर अगले दिन वो उसे ले कर घूमता रहता।

एक दिन वो मेरी गली मे आया और सब से बातचीत करने लगा। शाम का वक्त था। उजाला तो कम था ही, पर लाइट भी कम आ रही थी। वो आया और एक चबूतरे पर बैठ गया। उसे देख कर उस के आसपास भीड़ इकट्ठा हो गई। सब उस से उस के बारे में पूछने लगे।

मेरे पापा ने बड़े प्यार से पूछा: बेटा, बोलो, कहाँ के रहने वाले हो?
बंटी (कुछ शांत मूड में): अंकल, बिहार का।
पापा: यहाँ कैसे पहुँचे? यहाँ अकेले ही हो क्या?
बंटी की आँखों में आँसू आ गए। सब लोग एकदम सीरियस हो गए।
बंटी: अंकल, मैं ट्रेन में खेल रहा था। अचानक ट्रेन चल पड़ी। मेरे सारे दोस्त कूद गए। हाथ-पैर ख़राब होने की वजह से मैं नहीं उतर पाया और निज़ामुद्दीन पर आ कर उतर गया और यहाँ नांगला में आ गया। और यहाँ मुझे ये दीदी मिलीं (मेरी जान-पहचान की एक आंटी की तरफ़ इशारा करते हुए)।

कुछ देर ऐसे ही बातचीत चली। फिर उस ने मेरे घर में खाना खाया। उस दिन वो बसेरे को छोड़ गया। लोग आज भी उसे याद करते हैं।

## नांगला क्या था?

इन का चेहरा मुर्झाया सा था। इन्होंने धोती पहनी हुई थी, हाथ में एक लकड़ी थी, जैसे ज़िंदगी को अपनी मुट्ठी में पकड़ रखा है। उन दादा ने कहा, "बैठ जा और सुन। आज जहाँ नांगला है, वहाँ एक घना जंगल था। इस में साँप, बंदर, शेर जैसे जानवर थे। कुछ लोगों ने जंगल काट काट के लकड़ी की झोंपड़ियाँ बनाई, और आज ये एक बस्ती का रूप ले चुका है।

## समय बताने वाली मशीन

"यह समय बताने वाली मशीन, जो पानी में भी रहकर समय को बताती है। ये जापानी घड़ी, जो पानी में भी साथ देगी।" यह एक घड़ी वाला है, जो अपने एक हाथ पर डिब्बे से सजी घड़ी को रखता है। ये दीवार-घड़ी के नाम से पुकारी जाती है। इसी तरह दूसरे हाथ में भी वॉटर-प्रूफ़ घड़ी को अपनी हथेली पर लिए रहता है। वो पानी की डिब्बी पर तैरती रहती है। इन्हीं के मालिक के मुँह से आवाज़ निकलती है, "घड़ी ये,घड़ी ये लेलो"। घड़ी कोई ले या ना ले, ये आवाज़ को मारते हुए गली से निकलते हैं तो उन्हें देखकर कुत्ते भी भौंकते हैं। उनके शरीर की बनावट ही अलग है। सरदार जी, जो पतले ढाँचे के हैं, लेकिन सर पर एक बड़ी सी पगड़ी है। ये अपने दोनों हाथों में सुनहली ज्यादा , सफ़ेद-काले पट्टी की कम घड़ियाँ रखते हैं। नांगला की गलियों में इन्हें सस्ते ससते दामों मे बेचकर जाते हैं। लोगों को शौक पूरा हो जाता है।

## घर को वापस

नंगला गाँव की एक महिला अपनी भैंस का गोबर समेट कर उपले दे रही है, जो शायद इसी काम को रोज़ करती होगी। पानी, भूसा से गोबर को मिला कर उपले दे कर वह सूखे उपलों को पलट कर धूप में सुखा कर घर को वापस आ रही है।

## हर चीज़ को चुनना

हर चीज़ को चुनना फिर, संवारना एक कबाड़ी के पास नज़र आता है। सुबह की अलबेली हलचल के साथ उठ कर कबाड़ में मिली काम की चीज़ों को छाँट कर, अलग करते हैं। उनकी बीबी उस छांटे हुए को बोरों मे भरकर खड़ा करती है। कुछ कीमती तारों को जला कर, उन्हें बटोरते हुए अपने ध्यान को चाय की तरफ़ दौड़ाते हुए, दोनों मियां-बीवी चाय की चुसकी लेते हैं।

अब सुबह ने आगे कदम बढ़ाया। बीवी साईकिल पर बंधी पेटी में चावल के बने चुरमुरों को भर कर साईकिल के हैण्डल पर बोरों को लटका कर, पेटी पर भोपू को बाँधती है। इस भोंपू की आवाज़ से उनका चुरमुरा बिकता है सजी साईकल को लेकर उनका पति उनको बाय बाय करता हुआ फेरी के लिए निकल जाता है।

## तोहफ़े

भौरा कलियों की खुशबू लेने या रस पान करने के लिए अपने छत्तों को छोड़ कर किस तरह मंडराता हुआ फिरता है। ठीक उसी प्रकार झूरी भाई घर से निकलते समय अपनी जान अपनी मुट्ठी मे बन्द करके रास्तों की खाक छानते फिरते हैं। ये एक थ्री व्हीलर ड्राईवर हैं, जो अपने थ्री व्हीलर को ईश्वर और अपना कर्म भी मानते हैं। ये कहते हैं घर से निकल कर हर शख़्श परदेसी होता है। तभी गाड़ी पर लिखाते हैं, "परदेसी कब आओगे?" लेकिन झूरी हर सुबह अपने थ्री व्हीलर के साथ निकलते हैं। सुबह रोड-गलियों के चक्कर कटाती है, लेकिन "शाम हमारे लिए एक तोहफ़े के समान होती है जो हम अपने घर के दरवाज़ो को खुला देखते हैं।"

## बासी रोटी

एक दिन हवा के झोंको मे कट रहे दिन में अवाज़ आई, "पकी पकी रोटी लाओ । बाहर से भीतर जाओ ! मम्मी से रोटी को छीन के लाओ! पैसो पाओ ! नहीं तो कुछ खाने को पाओ !" वो हमेशा की तरह आवाज़ मारकर अपनी साईकल के पास खड़ा हो गया । अपनी साईकल के आगे झोला लटकाए हुए, पीछे केरियर पर एक बिना ढक्कन के बक्सा बांधे हुए, उसमें मीठी इमली , गुड से लिपटी लाई (जिसे शायद गुड़ लाई बोलते हैं) लेकर आया था । बच्चे अन्दर से बाहर आते, पकी पकाई बासी रोटी को लेकर आते। उसके पास आकर बोलते, "ये लो!" वो बच्चों के गालों पर हाथ को फेर कर बोलता, "ये लो टाईम पास मूँगफली । कल अपने खाने वाले हिस्से से रोटी को बचा लेना ।" बच्चे उसकी इमली, गुड लाई का स्वाद चखते और सड़क पर खेलने लगते अगले दिन के इन्तजार में।

## बुनाई

सोने के लिए चारपाई चाहिए । तो इसको बनाने वाला भी चाहिए । तो लो, यह आ गए बनाने वाले, जिनके हाथ पर एक साईकल है, जिसके केरियर पर पावां, सूमा, फोल्डिंग पलंग को बुनने के लिए प्लासटिक का पट्टा लिया हुआ है। साईकल के आगे, हैण्डिल पर, बसुली को टाँग रखा है । साथ मे सूमां निवार । इन्हीं के साथ आवाज़ को लगाता, "चारपाई सही करवा लो, चाहे मडवां लो"। ऐसा शोर करते हुए वो निकल पड़ते हैं, कोई बुनवाये या ना बुनवाये । उनके सर पर पीली पगड़ी बंधी है, हाथों पर स्टील का चूड़ा पड़ा है । इनके हाथों, पैरों के बाल सफ़ेद हैं । ये सबकी चारपाई को मज़बूत करते हैं । कीमत अपने हिसाब से लगाते हैं।

## सीडी

इन भाई साहब को देखिये। ये सीडी की दुकान पर खड़े हो कर कोई मनपसंद फ़िल्म ढूँढ रहे हैं। लग रहा है ये शाम से रात तक फ़िल्म देखेंगे। इन के साथ जो खड़े हैं उन्होंने कन्धे पर टीवी उठाया हुआ है। सीडी चुन ली, और इशारे से बता दी। अब चल दिये सीडी, सीडी प्लेयर और टीवी ले कर अपने कमरे की तरफ़। खाना भी नहीं खाया और बैठ गये फ़िल्म देखने। नज़रें कैसे एक टुक टीवी स्क्रीन से लड़ी हैं। दरवाज़ा खुला है, पर्दा हिल रहा है। बाहर तक हँसी-मज़ाक की आवाज़ आ रही है। उन में से एक ने जा कर पास के होटल से खाना ख़रीद लिये है, और अब दोनों मिल कर खाना खाते हुए फ़िल्म देखने में लगे हैं।

## कलाकार

एक लड़का जिसकी उम्र 28 साल है । उस ने कन्धों पर एक बाँस की लम्बी लाठी लटका रखी है, और उस पर से, उस के दोनों किनारों को डोरियों से बांध कर, एक बाँस की बनी टोकरी लटकी है । सर पर पगड़ी को बाँध रखा है । ये कोई सपेरा वाला नहीं, बल्कि एक कलाकार है, जो अपना कला अपने शरीर के साथ दिखाता है । कला के सारे आईटम उस ने अपनी उस टोकरी में भर रखे हैं । एक तरफ़ ढोलक है, दूसरी तरफ़ कुछ कपड़े, जिनके ऊपर एक बारह साल की लड़की बैठी है, जिस ने गालों पर गोल गोल टीका-नूमा रंग लगा रखा है और ढीला-ढीला जम्पर पहन रखा है ।

## एक ठहरी जगह

सड़क के किनारे एक ठहरी जगह, जिसे लोग प्यार से पुश्ता बोलते हैं। वहीं पर बनी एक मड़ई, जिसे लोग झोपड़ी कहकर आगे निकल जाते हैं । उसी पर बैठा एक अपंग आदमी, जो हमेशा अपने मुँह से ओ-ओ की आवाज़ लगाता रहता है । पता नहीं खाना कहाँ से आता है? कब नहाता है? हमेशा वह उसी कमीज़ और तहमत में ही नज़र आता है। उनके मुँह से हमेशा लार बहती रहती है ।

उस दिन भी उनकी वही पुरानी आवाज़ ओ-ओ को दोहरा रही थी । उसी आवाज़ को सुनकर मैं पीछे मुड़ा तो कोई वहाँ मेरे अलावा कोई नहीं था । मैं उनके पास पहुँच गया, तो उन्होंने कमीज़ में बनी जेब की तरफ़ इशारा किया । इशारा की जेब से सिगरेट व लाइटर को निकाल कर मैं ने सिगरेट को उन के मुँह में लगा कर आग लगा दी । बाबा ने एक कश भरते हुए अपने हिलते हाथों से मेरा हाथ मिलाया । हाथ मिलाते हुए मैं उनसे दूर हो कर वहाँ से चला आया ।







## अपने भीड़ भरे रास्तों से गुम हो गई थीं गलियाँ

अपने भीड़ भरे रास्तों से गुम हो गई थी गलियां । एक गहरा वक़्त हर गली की अवाज़ों के सामने जम गया था। हर नये शख़्स का स्वागत करती या छूने वाली नज़रें आज अपने मे ही सिमटी सी दिख रही थी। दीवारों पर अंगीठी से बने निशान मलवे के ढेर को सहला रहे थे। रास्ता खाली होने के बाद भी गली में से निकलना भारी सा हो रहा था।

एक मिट्टी की रिसती दीवार के बाहर एक औरत नाली के ऊपर सिल्ली लगाकर अपने घर के झूठे बर्तनों को मांज रही थी । दूर से बस्ती की गलियों की पहचान करने वाला शख़्स आज उन्हीं गलियों मे कहीं सो गया था । गली के बीचों-बीच बना एक घर, जिसकी दीवारों पर अलग-अलग हाथों की नक्काशी नज़र आती है। दीवार पर चिपके किसी फ़िल्म की हिरोईन के पोस्टर, तो दूसरी दीवार पर पँसिल से लिखे ए बी सी डी और मोमी रगं से बने फूल । एक दीवार, जिसमें से ईंटों के छोटे-छोटे डब्बे बन गये हैं, ईंटों के हटने से । वहां से धूप सीधी ज़मीन पर पड़ रही है, जिससे फ़र्श में पड़े गड्ढों पर पड़ी मिट्टी चमक रही है, बिन्दुओं की तरह।

उसके दरवाज़े पर खड़ी एक औरत अपने बालों को कसती हुई उस समय को देख रही थी, जो समानों का चिट्ठा बनाये उसकी तरफ़ बढ़ रहा था । अपने बालों को और चेहरे को आईने में निहारती, और चद्दर को कसकर उसी में आईने को घुसा देती। बड़े पैमाने पर जिन्दगियों मे एक बदलाव सा आ रहा था। "क्या रह गया और क्या रह जाना है?" इसको सोच पाना तो शायद इस समय के लिये भी भारी था। वक़्त अगर कहीं पर ठहरा था तो बस गली-कूचों के बाहर सड़क के एक छोर पर।

अपने में हर किसी को समाने वाली ये बस्ती आज के शहर में कई नक्शो में अपना नाम दर्ज कर रही है। जहाँ हर रोज़ शाम को अपना पूरा दिन काट के आए लोग अपने को दोहराने के लिये ज़ेहन में कुछ पिछली यादों को दोहराते होते होगें...

चाय की दुकान के बाहर एक टेबल खाली पड़ा है । उसपर कपड़ा मारकर अभी-अभी चाय वाले ने उसको पेड़ के नीचे खिसकाया है । लोग उसके सामने से गुज़रे जा रहे हैं । कभी कुछ उसपर ठहरता भी है तो बस किसी की परछाई । चाय वाले ने स्टोव पर चाय का पानी चढ़ाया हुआ है । बड़े-बड़े पतीले ढक्कनों के नीचे बन्द पड़े हैं । सामने एसटीडी की दुकान पर चार लोग खड़े हैं। एसटीडी वाला बड़ा मसरूफ़ दिख रहा है। शायद इन्हीं में से किसी का नम्बर मिला रहा है।

अपने आपे से बाहर निकलती ये जगह, जिसमें अब कोइ भी परदा नहीं है। कमरे में रखी आज एक-एक चीज़ खुद ही अपनी कहानी कहती है । कहां कहां, कैसे कैसे उसे संजोया हुआ है, वो नजर मे अपनी जगह खुद से बनाता है।

आने जाने से बनती है एक जगह।
उसमें बस जाने से पलती है एक जगह।

## अधखुली दुकान

मनीराम भाई की सजी-सजाई दुकान भी आज नंगी हो गई । तालों का लटकना, पन्नियों का चमकना, पान की महक, कीलों के ढेर, कन्टेनरों में भरी टॉफियाँ, नमकीन मट्ठियाँ, सब पैक हो गए हैं । सभी ने उस दुकान से मुँह ही नहीं मोड़ा, मानो नाता ही तोड़ दिया है । अब कोई रिश्ता नहीं, कोई नाता नहीं, कोई गरज़ नहीं कि ये दुकान हमारी पहले कोई थी । पर अभी भी कुछ एसा सामान है, जो अधखुली दुकान पर बिक रहा है । चाय की पत्ती, पापे, गुटखे,पारले-जी के बिस्किट, मट्ठी । ये सब आज किसी पर्दे पर लगा कर प्रदर्शन पर नही हैं, बल्कि काउन्टर के उपर ही रखे हैं, और वहीं से बिक रहे हैं । गुटखे का तो दाम दो का तीन हो गया है । कुछ लोग हैं जो पहले की तरह जाते हैं, पर चीज़ें माँगने पर दाम सुन कर, अपना सा मुँह लेकर अपने घर वापस आ जाते हैं ।

## नगंला की रात

आज कल नांगला की रात कैसी होती होगी? एक तो लाइट नहीं, और ऊपर से एक वीरानापन। कुछ-कुछ घर अभी भी बचे हुए हैं जिनमें लोग अभी भी अपनी रोज़मर्रा को जी रहे हैं । पर शाम का सूरज ढलते-ढलते वो भी अपने घोंसलों मे बैठ जाते होगें, मोमबत्ती या चिरागों की रोशनी को घेर कर । और लम्बी चर्चा होती होगी, ना जाने कितने मुद्दों पर । वो मुद्दा कुछ भी हो सकता है - सरकार, पिछला समय जो यहाँ गुज़ारा है । उसे दोहराने पर या याद करने पर उन की बातचीत कहीं ना कहीं इस विस्थापन को छू रही होगी । और बातों में अपनी गाढ़ी छवि बना रही होगी ।

आजकल की नांगला की रात में लोगों के अपने-अपने दायरे नहीं होते होगें । एक सांझी रात गुज़रती होगी, बातें करते-करते। रात में क्या कल्पना लेकर सोते होगें, अपनी अगली सुबह के लिये? बीते हुए कल का गाढ़ापन और आने वाले का अदृश्यपन किस तरह का फ़ोर्स पैदा करता होगा? उस फ़ोर्स को लोग कैसे लेते होगें? वो कहीं न कहीं तो देखने को मिल ही जाता होगा । जैसे हम जब शाम को नंगला की गलियों से बाहर निकल रहे थे तो बीच में एक फ़ोल्डिंग बेड पर सात-आठ आदमी ताश खेलते दिखे । चेहरों पर हल्की मुस्कान की लकीरें थीं। सबका सारा ध्यान ताश के पत्तों और अपनी बाज़ी पर था। अभी भी जो घर बरकरार हैं, वहां पर औरतें अपने घरों के आगे सफ़ाई करती हुई नज़र आतीं हैं ।



बड़े-बड़े शहरों में कुछ नम बातें

## किसी घने जगंल मे धीरे–धीरे फैलती आग

दिल का ख़ौफ़ जैसे ही आँखों मे उतरता है तो हवा, जगह, चीज़ें, वक्त, सब कुछ शून्य होता नज़र आता है। वो दहला देने वाला मंज़र जब आँखों के आगे आता, तो हाथ पैरों में चीटियाँ सी काटने लगतीं। अलग–अलग ख़्याल मन में घर कर जाते। अभी बस्ती में घरों को तोड़ने का काम चल रहा था। कि वहां पर फैले हुए दीवार के टुकड़े, जिनके बीच में छोड़े गये रहने वालों के जूते, चपल्ल, खिलौने, कैलेन्डर लगे हुए छूट गये थे। कुछ और घर टूटे, जिन की छाप अभी भी घूमते–फिरते लोगों के दिलो–दिमाग़ पर दस्तक दे रही थी। लेकिन उस दस्तक के जवाब में किसी के पास में कुछ नहीं बचा था। बस्ती में किसी के घर में मोढ़े पर ही बातचीत करते शख़्स घर टूटने वालों की सिसकियाँ सुन तो रहे थे, मगर दिलासा देने के अलावा और कुछ ना था। ये वक़्त उस मुकाम पर आ पहुँचा था जहाँ पर कुछ छोड़ना भी मुश्किल था और पाना भी मुश्किल।

ये तबाही का सिलसिला था, या कुछ और? अभी भी किसी घने जगंल मे धीरे–धीरे आग फैल जाने जैसा था। जिसे देखकर  कुछ कहने में सीने में कुछ उबाल तो आता, लेकिन समय से कौन जीत सकता है। लड़ते–लड़ते इसांन का अस्तित्व भी ओझल हो जाता है। जितना चाहे बटोर लो, जब वक़्त अपना चित्ता खोलकर पुछेगा, तो उसकी वसूली कुछ तो महंगी पड़ेगी। फिर बाकी हिसाब होता रहेगा।

अब उन गलियों, घरों की दहलीज़ पर कदमो के निशां उतने गहरे नहीं होगें, जितने पहले हुआ करते थे। शायद वो हसीन रंगीनियत अब इन्हें ना चूम पायेगी, गुनगुनाते मुँह की सरगम, मचलते शख़्सो की हटखैलियां अब गायब हो जायेगी। जहां पर सुबह कई रिती–रिवाज़ों का चोला ओढ़े सुन्दर और मोहक दर्शनिय चेहरों की मुस्कुराहट में निकलती थी, जहाँ जीवन की पूर्जी नज़र आती थी, वहाँ अलग अवसर, तीज, त्यौहार को मनाते लोगों का झूण्ड पहले की तरह खुशियों को बाँटता अब दिखाइ नहीं देगा।

लेकिन आँखो में भय को उतारने वाले इस मनंज़र से लोग अपनी भटकी हुई तकदीर किस ठिकाने  पर लगाकर सोचें? कैसे सोचें कि वक़्त उन को वहाँ ले आया है जहाँ उन्हें बेसहारों की तरह अपने छोटे–मोटे समान को यूहीं छोड़ना ना पड़े, इस की ही धुन बस मन में रह गई है। कितना कुछ तो सीने में दफ़न ही था, लेकिन रह–रहकर भड़ास ख़ुद पर ही उतर रही थी।









## हलुआ–परांठा

इतवार के दिन की दोपहर का रुख ही अलग होता है। अधिकतर लोग अपने अपने कमरों को साफ़ करते हैं। तो नलों पर भीड़ होना तो स्वभाविक है। जो बाकी दिनों से बिल्कुल भिन्न है। फेरी वाले तो बहुत हैं,  लेकिन यह फेरी वाला सिर्फ़ इतवार को नंगला की गलियों मे पैर रखता है। एक नहीं, दो एक साथ आते हैं। एक रिक्शे के पास खड़े होकर हलुआ–परांठा बेचता है। दूसरा गलियों में जाकर माईक से अवाज़ को लगाता है की, "आठ रू॰ का आधा किलो"। तो लोग पूछते हैं कि तेरा हलवा कहाँ है? तो माईक को मुँह में लगाते हुए बोलता है, मेन सड़क पर जाओ। गर्म–गर्म हलुआ–परांठा को ले आकर खाओ। इस तरह कह कर आगे वाली गलियो मे घुस जाता है।

## रेहड़ी के पास

बाबा अपने हुनर के साथ एक रेहड़ी के पास खड़े होकर अपनी सब्ज़ी को बेच रहे थे। वह अपनी रेहड़ी को बस्ती के पास बने पार्क की दिवार के सहारे सजा कर रखते है। एक दिन कुछ लड़कियाँ उनके पास से गुज़र रहीं थीं, तो बाबा बोले, "छाँटो! बीनो! माल बहुत बढ़िया है।" लड़कियों का झुण्ड रूक गया। "बाबा तुम्हारा माल कहाँ है?" बाबा झट से रेहड़ी के पास जाकर खड़े हो गये और बोले, "छाँटो, बीनो। पुरानी आलू है। मीठी नहीं है।" लड़कियों ने बाबा को घेर लिया।
"बाबा तुम्हारे आलू में दम नहीं है।"
"तो बैंगन ले लो। छोटी वाली भाँटी है।"
लड़क्यों बोलीं, "बाबा तुम्हारे चश्मे का एक शीशा फूटा है। ये तो आँख मारने का सरल तरीका है।"
सब चुप हो गये।

## बारात

एक शाम पुश्ता की तरफ़ लाल कलर की चाँदनी लगी हुई थी। किसी की बारात आनी थी। डेकों की आवाज़, लड़कों की चहल–कदमी ने शोर मचा रखा था। एक आवाज़ आयी, "गाना बन्द करो"। लेकिन सुनता कौन? सब जश्न मना रहे थे, और बगल की दिवार पर एक हिरोईन का पोस्टर लगा रखा था, जो हंसती हुई मालूम हो रही थी। उसके सामने वाले कमरे में दुल्हन सज–धज रही थी। कुछ लड़कियाँ उसे सजा रहीं थीं। वह चुपचाप अपनी मुस्कान को रोके हुए एक अलग ढंग से सज रही थी। सजाने वाली लड़की कभी उसके गाल पर मारती, तो कभी फूलों की गुथी माला को गले में डालकर देखती।

बारात आ गयी। बाराती खा रहे थे। दुल्हा स्टेज़ पर बैठे दुल्हन का इन्तजार कर रहा था।

## एक ऐसा कमरा

एक ऐसा कमरा जो सिर्फ़ दो दीवारों की बुनियादी नीवं के सहारे बना था। उस कमरे में दरवाजे अपने हैं, दीवारें किसी और की हैं। यह आम लोगों की नज़र में गली है, लेकिन हमारी नज़र मे तो यह हमारा कमरा है। एक तरफ़ की दीवार आधी पक्की ईट से और उपर की पूरी पक्की ईट से बनी है। यह दीवार 16 साल पुरानी है। जिसमें कोई नीवं नहीं, फिर भी नीवं से बेहतर है। जिसमें नीचे से कीचड़ की दीवार और उपर से ईटो की दीवार। दूसरी दीवार तो इस तरह की बनी है कि जो मिट्टी और छोटी कंकरी–पत्थरों की बनी है। जिसमे कुछ उबड़ खाबड़ ईटे भी लगी है। जिसमे कई छेद है। जो दूसरे कमरे की उम्र को दिखाती है। इसमे एक मोकवा है जिसमे कोई खिड़की नहीं, कोई दरवाज़ा नहीं। लेकिन वह मोकवा हमारे दूरबीन का काम करता है। मोकवा के उस पार एक रंगीन टीवी रखा है। जब भी हमारा मन चाहता है, उस मोकवा में हम सभी फैमिली के साथी फ़िल्म या नाटक देख लेते हैं। तो कभी–कभी वह मोकवा काले कपड़े से ढक दिया जाता है – ज्यादातर सर्दियों में। फिर भी हम उस कपड़े को हटाकर एक आँख से फ़िल्म देख ही लेते हैं।

कमरे के अगल बगल ऐसी दीवारें हैं। लेकिन दरवाज़े भी दो हैं – एक आगे और दूसरा भी आगे। पीछे नहीं जाते हैं। सभी अपने सामने से बस्ती की अन्य गलियों को देखते हैं। जिधर मन चाहे, उधर आगे निकल जाए। पर्दे तो दोनों दरवाज़ों पर पड़े हैं। पर्दे शहनील के चद्दर हैं, जो हवा में हिलते रहते हैं।

एक दरवाज़ा तो हमेशा ही चुप रहता है। दूसरा तो चैन की सांस लेकर सोता रहता है। तो कभी उसे धम्म की आवाज के साथ जगा दिया जाता है। और वह ची ची की आवाज करता हुआ खोल दिया जाता है लेकिन बहुत कम समय के लिए।  दूसरा तो हमेशा आते जाते लोगों को अलविदा करता रहता है – चाहे सुबह हो या शाम। लेकिन दरवाज़े के पैर कमज़ोर हुए हैं। इससे तो चूने और रोबिस से बनी दीवार मज़बूत है। दरवाज़े की शोभा तो पीछे लगा पर्दा बढ़ाता है।

देखा जाए तो लोगो की नज़रे उस कमरे की छतो को नही देख पाती। फिसल कर नीले आकाश मे छा जाती है, प्रकृति के नशीले रूप को देखकर।

## नांगला क्या था?

इन का चेहरा मुझाया सा था। इन्होंने धोती पहनी हुई थी, हाथ में एक लकड़ी थी, जैसे ज़िंदगी को अपनी मुट्ठी में पकड़ रखा है। उन दादा ने कहा, "बैठ जा और सुन। आज जहाँ नांगला है, वहाँ एक घना जंगल था। इस में साँप, बंदर, शेर जैसे जानवर थे। कुछ लोगों ने जंगल काट काट के लकड़ी की झोंपड़ियाँ बनाई, और आज ये एक बस्ती का रूप ले चुका है।

## बिजली चली गई

शाम का समय था। बिजली ने अपनी आँखें बंद कर रखी थीं। लोगों ने अपने घरों की चौखट पर दीये और पेट्रोमेंक्स जलाए हुए थे। कुछ कैंडिलों के सहारे बैठे थे। सभी चुपचप थे, मानो किसी के इंतज़ार में आँखें बिछाए बैठे हों। बच्चों की टोलियाँ बिजली जाने का आनंद उठाती हुई इधर-उधर दौड़ लगा रही थीं, जैसे आसमान में चीलें मंडराती हैं। पढ़ने का तो सवाल ही नहीं था। दुकानों में शीशों के पास कैंडिलें जलीं थीं, एक की दो नज़र आ रहीं थीं। कहीं तो एक की चार दिख रही थीं। बाज़ार में वो रौनक नहीं थी जो बल्बों की लड़ियों से नज़र आती है। ये शाम तो बड़ी अलबेली लग रही थी।

नांगला के मुख्य द्वार पर रास्ते को खोद कर बिजली की नसों को चेक किया जा रहा था। वहाँ भीड़ जमा थी। काम चार लोग कर रहे थे, बाकी तो बिजली की जुड़ती, अलग होती नसों को देख रहे थे। देखने के लिये कोई मोबाइल की लाइट मारता, तो कोई टॉर्च। पेट्रोमेक्स का उजाला था। बिजली आने में अभी दो-तीन घन्टों का समय तो ज़रूर लगेगा।

## काम को निकले

जिस तरह कलियाँ खिलने से मानती नहीं, सूरज के निकले के साथ अपना मुँह खोलती हैं, अपने एक -एक अंग को खोलकर रख देतीं हैं, उसी तरह अपने रैन बसेरे को त्याग कर क्रियानवित कामों को करके निकलता एक शख़्स जो काली पैण्ट – सफ़ेद शर्ट पहने हुए, हाथ पर सुनहली घड़ी बांधे, उसी हथेली पर पेण्ट करने वाला ब्रुश लये, जो उनके काम का पहचान करवा रहा है, अपने कमरे का दरवाज़ा बन्द करते हुऐ निकल रहे है। नांगला की मकड़ी के जाल जैसी गलियों को चीरते हुए देखो कहाँ पर आके खड़ा हुआ है - रिंग रोड पर। पता नहीं किस बस पर बैठेगा। उसके सामने से कई बसें गुज़र चुकी हैं।

## बेसन के पकौड़े

एक अम्मा शाम के समय एक रेहड़ी के साथ नज़र आतीं हैं। उनके साथ कुछ सामान रहता है, जो रेहड़ी की रौनक को बढ़ाता है - स्टील का भगोना जिस पर पानी से लिपटा हुआ बेसन भर कर रखा होता है, एक परात जिस पर प्याज़ के बारीक टुकड़े, हरा धनिया, मिर्च के कटे कुछ टुकड़े होते हैं, और एक तरफ़ ब्रेड के तिकोने कटे टुकड़े, जो बेसन से लिपटे होते हैं। अंगीठी पर तपती छोटी कढ़ाई पर नाचते पकौड़े जो तेल पर एक दिशा से दूसरी दिशा की तरफ़ नाचते हैं। उन माता जी के हाथ में एक झाँझा रहता है जिस से वो नाचने वाले पकौड़ों को रोक कर रखतीं हैं। साथ ही साथ वो आने वाले ग्रहकों को भी सभालतीं हैं। ये माताजी अपने गर्म पकौड़ों से सबकी आत्मा की भूख-प्यास को मिटाती हैं।

## कल की सुबह

कल की सुबह किस तरह की होगी, इस की हलचल सभी में रहती है। और हर सुबह की कश्मकश की साँसें भरते रोज़ शाम का इंतज़ार होता है। वैसे ही, जैसे दाना चुगने चिड़िया घोंसले से निकल कर अंबर तले दूर तलक जाती है, पर अपने घोंसले में लौटने का ख़्याल हमेशा मन में रहता है। नांगला से भी लोग हर सवेरे कमाई करने शहर में दूर-दूर तक जाते हैं, और फिर शाम का इंतज़ार होता है, कि कब वापस चला जाए। रास्ते में बाज़ार से कुछ दिली चीज़ें ख़रीदते हुए सब घर पहुँचते हैं। कोई चौखट पर बैठ जाता है, तो कोई अपने बिस्तर में पनाह पाता है।

और शाम को नांगला में घुसते ही कम चीज़ें नहीं हैं। नांगला के मुख्य द्वार से प्रवेश करते ही हसीन भाई की जूस की दुकान है। कई लोग नांगला में घुसने से पहले वहाँ रुक कर जूस पीते हैं - चाहे पैसे तब के तब दें, या महीने भर के एक साथ। कोई जलेबी खा रहा है, तो कोई चाओमीन के ठेले पर खड़ा चाओमीन खा रहा है। जो बाल-बच्चों वाले हैं वो अपने बच्चों के लिये केले, अंगूर, मूँगफलियाँ ख़रीद रहे हैं।

और ये देखिये शिव प्रसाद जी को। ये लंबे-चौड़े हैं और अभी पेंट का काम कर के लौटे हैं। इन के हाथों और अंगुलियों पर पेंट लगा हुआ है। कितने ख़ुश लग रहे हैं - शाम जो है! ये मीट ख़रीद रहे हैं। अब इसे पकाकर, खाकर आनंद से सो जाएँगे।

## नांगला क्या था?

ये ख़ुद को यहाँ का प्रधान कहते हैं। धोती-कुर्ती, सर पर टोपी जिसकी आगे की नोक थी। वो बोला, "सुन। यहाँ पहले चारों तरफ़ पानी ही पानी था। हम ने मिट्टी भर-भर के भरवाई।जो छोड़ दिया, वो आज यमुना नदी है। उस नदी के साथ-साथ एक बस्ती है, जिस के अंदर तीन आकार हैं - मतलब तीन बसेरे हैं। इन को मिलाकर नाम दिया जाता है, नांगला माँछी।"









## अब कोई शक़ नहीं है

अब ज़्यादातर घर टूट चूके हैं। लोग ख़ुद भी अपने हाथों से अपने घरों को तोड़ रहे हैं और उसमें से वो चीज़े निकाल रहे है जो उनके काम मे आ सकती है। घरों की अदंरुनी सतह, जिसे हम अपने लिये सजाते हैं, वो अब नज़र आ रही है। जैसे कि एक दीवार पर पजांब केसरी के काफी सारे पन्ने चिपके हुए हैं, जिसमें हीरो-हिरोइन कि बड़ी सुन्दर-सुन्दर फ़ोटोएं हैं। वो आते जाते की नज़र को कम से कम एक बार तो अपनी तरफ़ मे खीचं ही रही हैं।

अब एक स्थिरता आ गई है। शायद इस कारण की एक बार बुलडोज़र चल चुका है और अब दूसरी-तीसरी और कई बार चलने में कोई शक नहीं। और अब तो विरोध करने की भी कोई जगह नहीं।

इतने सालों का इतिहास, जिसे लोग अपने अंदर लेकर चले गये, और जा रहे हैं, और बाकी जो बचता है वो मलवे मे दब रहा है। धीरे-धीरे बस चार दिन ही इसकी चर्चा अखबार और टीवी मे रहेगी फिर ख़त्म।

## बड़ा बेकार काम है ये

"ओए सारे यहाँ क्या कर रहे हो ? चलो अगली गली मे चलो और घर तोड़क लोगो का दस्तां अपने-अपने औजार उठाए आगे बढ़ गया... और दूसरी तरफ़ सिर फेरे बालों को खींचती हुई एक औरत ज़ोर-ज़ोर से गालियाँ दिए जा रही थी - "आने दो उसे आज"।

चार लोग एक छत पर चढ़े भारी हथौड़े से उसपर जी-तोड़ ठोका-पीटी कर रहे थे। नीचे गली मे 5-6 लोग बिखरे मलबे को उठाकर किनारे लगा रहे थे। दो पुलिस वाले - एक गली के उस तरफ़ और एक इस तरफ़ - खड़े हो कर आते जाते लोगों को रोक रहे थे। सामने वाली छत पर खड़ा एक बड़ी हैट लगाए पूरी प्रक्रिया को कवर कर रहा था। पूरी गली मे धमाधम हथौड़ो और पत्थरों के गिरने का काफ़ी शोर था। इतना आसान नहीं था इस होते हुए समय को देखते हुए निकल जाना। एक पतली सी गली मे आज बहुत सारे लोग थे। बाहर इसको होते देखने वालों की भीड़ जमा थी। कान एक आवाज़ पर रुकने का नाम ही नहीं ले रहा था। एक के ऊपर दूसरी आवाज़ चढ़ जाती।

गली की ढलान शुरू होते ही ये घर अपनी धड़कनों से बाहर था। अंदर होती पीले रंग की सफ़ेदी धूप की सफ़ेद रोशनी में चमक रही थी। टूटते घरों को देखने वाली नज़रें शांत नहीं थीं। वो घर था पर अपने में सिमटता जाता। लोग एक दूसरे की पीठ को सहलाते और आँखो को खड़ी पुलिस पर डालते।

लोग आज उड़ती धूल और किसी को गाली देने से उक्ता भी नहीं रहे थे। एक दूसरे को सुनने और एक दूसरे की हाँ मे हाँ मिलाकर साथ वाले के दिल मे चलती परेशानियों को धारण कर रहे थे। "देखो तो सही कितना सुंदर घर है। अरे दरवाज़ा तो निकाल लेते"।

घर तोड़क दीवार के बड़े बड़े टुकड़े निकाल कर एक दूसरे को पकड़ा रहे थे। मलवे मे दबे कुछ कपड़े और शीशे, जो अभी तक इस जगह को छोड़ने को राज़ी नहीं थे। मलवा उठाने वाले यह देख रहे थे कि क्या क्या छूटा है। "अरे इसका तो पर्स भी नया लगता है अभी कुछ समय पहले ही लिया होगा।"

साथ में बैठा एक आदमी अपने मुहँ मे ढेर सारा पान दबाये धूप में ही अपनी आँख को अपनी हाथ की दो उंगलियों से भीच रहा था। पलकें जैसे हथोड़े के हर थाप पर झन्ना जातीं, फिर भी हर पल को देखे जा रहा था। चलते कदम वहाँ पर ठहर ही जाते। अपने हाथों को पीछे बाँधे ये लोग यहाँ से कुछ अपने दिमाग में भर रहे थे। शायद ये किसी का घर नहीं टूट रहा था, बल्कि कुछ एसा है जो पहली बार तो नहीं देखा लेकिन समय की सुई भारी हो गई थी। और अपनी नज़र उसपर गढ़ाए थी जिसके लिए यह सवाल था कि "अगला किसका आशियाना बिखरेगा"।

"अरे कितने लोगो का तो पैसा तक छूट गया। इन्होने तो यह भी ना छोड़ा हाय लगेगी जूतो के हार चढेगें"।
"देखो कितना सुंदर मकान है। जब पूरी के छोड़े तो यह क्यों तोड़ा?"
पाँव दर पाँव, कदम दर कदम आवाज़ों से ज़हन में एक थरथराहट सी उठती, जिसमें अगले पल की क्या कल्पना होगी, वो तो धुँधला था, लेकिन भरी सुन्न आँख में कुछ सपने नहीं बचे थे आज।

कल के सपने बिखरे मलवे मे तब्दील हो गए थे। उम्मीदों के ढाँचे अब साँचो मे बदल गए थे। किसी भरे पड़े खरओन्जों में तोड़क कुछ छाँट रहे थे। और दूर से नज़ारा करते लोग अब भी वहीं खड़े थे। एक शख़्स वहीं सड़क पर ईटो पर बैठा कभी घर की तरफ़ देखता तो कभी तैनात डंडा लिए पुलिस वालों को बस देखे जाता। "अरे तोड़ दिया पूरा! अब कम से कम बिखरा, टूटा सामान तो छोड़ दो।"

घर के दरवाज़े पर ताला लगा था और दरवाज़ा दीवारों से अलग होकर एक तरफ़ पड़ा था। सबके दिमाग मे यही था कि आखिर में यह किसका है ? घर मे ताला क्यों लगा है ? इतना सामान छूट गया, क्या उसे पता नहीं था। बस यही जद्दोजहद दिमाग में घर कर रही थी।

वहीं पर सिर पर काली टोपी जाली वाली और एक हाथ मे नीले रंग की पट्टी बाँधे एक शख़्स ने पूछा, "ये किस का मकान है ?" तो दूर एक काली छतरी के नीचे अपने बच्चे के साथ बैठी एक महिला बोली "बाबूजी हमारा घर है।" बस सबकी ज़ुबाँ जैसे अब ख़ामोश हो गई थी। वो महिला अपने बच्चे को एक थाली में सब्जी से लिपटा चावल खिला रही थी।

घर तोड़कों का काम ख़त्म हो चुका था। अपने कंधे पर भारी हथौड़ा टागें, माथे पे पसीना लिये एक दूसरे से बोले जा रहे थे कि "बड़ा बेकार काम है ये"।

## जिसके पास कुछ नहीं

"जिसके पास कुछ नहीं है वो किसी चीज़ की परवाह नहीं करते। बस्ती जब टूटेगी तो देखा जाएगा। जहाँ ज़मीन देंगे, वहीं पर जाएंगें। अगर जगह नहीं मिली, तो बच्चों को गाँव भेज देंगे। हम लोग तो यहीं रहेंगे, या सड़क के किनारे ही गुज़ारा कर लेंगे। कमाना तो है ही!" फिर रुक कर वो बोले, "जब तक दिल्ली में थ्रीव्हीलर चलेंगे, तब तक हम यहीं रहेंगे... समय से मार खाए हैं, साला मुकद्दर ही ख़राब है।"

## खोना

अब तो लोग अपने घरों को टूटा देखकर अपनी आँखों के आँसुओं को होंठों में गिरा कर प्यास बुझा रहे हैं। कुछ तो भूख-प्यास को भुला कर अपने टूटे हुए घर पर इस तरह खोए हुए हैं मानो उनका सब कुछ लुट गया हो। अब उन्हें किसी चीज़ का ग़म नहीं, ग़म तो सिर्फ़ घर का है, जिसे इन्होंने बड़े प्यार के साथ सजा-संवार के बेटी-बेटा की तरह पाल-पोस कर बड़ा किया था। वो आज उनकी गोद से छिनकर, उनकी गोद को सूना बना दिया है। ऐसे दृश्य को देख कर ख़ुद के आँसू भी नमकिन नहीं, ख़ारे लगने लगते हैं।

## कोई घर कब बना था, तब पता चलता है जब उसे तोड़ा जाता है

वो आंटी जब अपने सामानो को निकाल के घर खाली करने की तैयारी कर रहीं थीं तो वो बता रहीं थीं कि यह मेरे बेटे ने अपने जन्मदिन पर बनवाया था। यह दीवार मेरे पती और उनके भाई के अलग होने की निशानी है। यह छत मेरे बेटे के कमाने की वजह से पक्का हुआ था।

आज हर घर अपने टूटने से पहले अपने बनने को दोहरा रहा है।

कुछ लोग तो अपने घरों को अलविदा भी नहीं कर पा रहे हैं। तेज़ धूप उनके सर से फिसलती हुई उनके चेहरे तक आ रही है।

सड़क पर लाईफ़ अब भी नोर्मल है। गाड़ियों का आना-जाना अब भी चल रहा है। दिल मे अरमान और शरीर मे थकान लिए लोग अपने घरों की कदम अपने बनावटी आशियाने की तरफ बढ़ा रहे हैं। यह आशियाना है या यह बसेरा बनेगा यह कहना मुश्किल है।

सालों से बने बसेरे घर तोड़ने वाले मज़दूर के पसीने के साथ बहते और हवा मे गायब होते दिखाई दे रहे हैं। घरों को तोड़ने वाले शख्स तोड़ते समय यह नही देख रहे हैं कि यह किस रंगीनियत से बना था। वो तोड़ते वमय यह बता रहे हैं कि जब यह बना था को ज्यादा पैसे लगाए गए थे या कम।

अखबारों की कटिगं, मैगजीन की कटिंग या फिर पोस्टर लगाकर दीवारों को रंगीन बनाना, या देवी-देवताओं के फ़ोटो से उस मकान को मंदिर बनाना आम था इस जगह में। जो यह जगह छोड़ कर जा रहे हैं, उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता कि वो जिस बसेरे को तलाशते हुए जहाँ जाएंगे, वहाँ कौन कहाँ से आया है, हमारे से पहले वहाँ कौन रहा होगा, हमारे बाद हमारी जगह पर क्या होगा ? वो तब तक इन बातों को नहीं सोचेगें जब तक कि वो अपने जीने के तरीके को उस माहौल मे ढाल ना ले जहाँ वो रहते हैं।









## कंधे पर हमेशा एक झोला

एक लड़का, जिस की उम्र पंद्रह से सोलह साल है, जो सुबह की पहली किरण दो सौ से चार सौ रुपये कमा कर ही देखता है। वो अपने बालों को हमेशा लंबा रखता है। उस के कंधे पर हमेशा एक झोली रहती है। उस का रंग सांवला है और वो मुँह में हर वक्त दिलबाग चबाता रहता है।

वो हमेशा उन जगहों पर जाता है जहाँ शायद जाने से सब कतराते हैं। ये ज़मीन से पैसा उठाता है, लेकिन जिसे उठाने को कोई राज़ी नहीं होगा। वो अपने शरीर को झुका कर काम की कोई भी चीज़ उठाता है और अपनी झोली में भर लेता है।

उसके पीछे कुत्ते-सुअर घूमते रहते हैं, पर वो निडर हो कर नांगला के आसपास कूड़ा फेंकने के स्थानों पर घूमता है। जहाँ उसे कुछ मिल जाए – प्लास्टिक की बोतल, कागज़ का टुकड़ा – वो उसे हाथ से या लोहे की तार से उठा कर बीनता फिरता है। एक डंडे के नीचे चुंबक लगा कर वो नांगला में बनी नालियों में डाल कर चलता निकल जाता है, और जो कुछ उस से चिपकता है उसे अपने तसले में जमा करता रहता है।

सूरज निकलने से पहले वो अपना काम पूरा कर के किसी दुकान पर सभी लोगों के साथ चाय पीता है और सूरज ने के साथ साथ वो भी निकल जाता है।

## सजी ठेली

"बूढ़ा खाए, जवान हो जाए। बच्चा खाए, तो टाईम पास हो जाये।" इसे जवानों की कदर नहीं। दोपहर का वक्त है। जवान तो दिल्ली के अनेक भागों में जाकर काम करते हैं। तो बसेरे की रौनक बहुत कम हो जाती है। बच्चे-बुजर्गों के साथ महिलायें भी महकती दोपहर में नांगला में ही काम करतीं हैं। वो घरेलू कामों को पूरा करतीं हैं। उसी तरह एक उभरता चेहरा जो मूँगफली के दाने व मक्का से सजी ठेली को लिऐ घूमता है। जिसका कद काफ़ी छोटा है, जो लाल शर्ट काली पैन्ट पहने है। चेहरे पर एक मसा है जो उसकी मुसकान को और बढ़ा देता है। वह किसी भी गली में अपनी सजी रेहड़ी को खड़ा करके, किसी भी गली में धुस जाता है। वो अपने हाथों में एक चाकू को लिए रहता है। वो एक आवाज़ को मारता है, "खरी भूजी मूँगफली को खावो, नहीं तो खड़े-खड़े पछताओ"। ऐसा कुछ कहकर वह अपनी रेहड़ी के पास जाकर खड़ा हो जाता है।

## मेरी भी अपनी कहानी है

मेरी भी अपनी कहानी है, लेकिन कोई सुनने वाला नहीं है। यार, मेरी भी हकीकत भरी कहानी है। जो इस समय सोचने पर मजबूर कर रही है, या कहो सता रही है। जिसे अगर मुझे कोई लिख कर दे तो शायद हमारा दिल हल्का हो जाये।

तब नितिन बोला, "कुछ तो बताओ या लिख कर दो, तो हम कुछ लिख सकते हैं।"
"तो सुनो मेरी कहानी। एक चाहत है, जो तुम्हारी कहानी से कुछ मिलती जुलती है।"
तब नीतिन ने पूछा, "आँख कैसी, चेहरा कैसा, उसकी अदा कदा किस प्रकार की है?"
वह ऐसे प्रशनों को सुनकर बोला, "ठहरो लिख कर दूँगा।"

## नांगला क्या था?

एक अठाईस साल का शख्स जिस के बाल 'तेरे नाम' के सलमान खान जैसे हैं। उस ने सफ़ेद पैंट और काली शर्ट पहनी थी, जिस पर चमकते मोती लगे थे। वो बोला, "यार, यहाँ पहले दलदल ही दलदल था, जिसे तीन-चार लोगों ने भरा। मैं भी इन में से एक था, हालांकि तब मैं छोटा सा था। दलदल ख़त्म होते ही घर बनते चले गए।"

## संडे

इन जनाब को देखिये! इन के आव-भाव से लग रहा है कि इन के लिये सप्ताह में ये एक दिन ऐसा है कि बिस्तर छोड़ने का मन ही नहीं करता! शरीर पर आलस ही आलस निखार ले रहा है। मन है, कि बस ज़मीन पर लगे अपने बिस्तर पर लेटे ही रहें। सूरज कब का निकल चुका है, पर मुँह पर चादर औढ़ कर ये किरणों से आँख -मिचोली खेलने में लगे हैं।

पर इन दादा-पोता की जोड़ी को देखिये! हफ्ते भर में अपने शरीर में भरी थकान को तोड़ने के लिये कैसे चुस्त हो गये हैं! बारी-बारी एक दूसरे के शरीर पर तेल की मालिश कर रहे हैं। फिर पानी को अच्छी तरह गरम कर के मन लगा कर नहाएंगे। ये तो इन के हर संडे का प्रोग्राम है। संडे का दिन, मतलब इन के पास शहर में क़दम रखने का समय ही नहीं। एक-दूसरे के साथ समय बिताते हुए ही सारा दिन कहाँ निकल जाता है, पता ही नहीं चलता। हफ़्ते भर की व्यस्तता में जो समय एक दूसरे के साथ नहीं बिता पाते, उस की कसर संडे के दिन पूरी करने की कोशिश करते हैं।

पर वहीं कुछ लोग ऐसे हैं जो संडे की सुबह अपने अंदर अलग ही चुस्ती ले आते हैं। संडे सुबह आई जी स्टेडियम के पास एक बाज़ार लगता है, जिस में सामान काफ़ी अच्छा और सस्ता मिल जाता है। इस बाज़ार को चोर बाज़ार के नाम से जाना जाता है। यहाँ जा कर ये लोग सेकेण्ड हैंड सामान को अपने घरों में जुगाड़ से चलाने के लिये ख़रीद लाते हैं। चादर, कूलर, लत्ता-कपड़ा, बिजली का सामान – ये सब वस्तुएँ नांगला के अंदर लाई जातीं हैं। अब इन जनाब को देखिये। कितने प्यार से किसी की मदद ले कर फ्रिज ले आ रहे हैं। अब ये फ्रिज गर्मी में पानी ठण्डा करने के मकसद से लिया है, या फिर घर के बिखरे-फैले पड़े सामान को व्यवस्थित रूप में रखने के लिये अलमारी बना के काम में लाने के लिये, ये तो यही बता सकते हैं!

यहाँ एसटीडी दुकान की चहल-पहल को देखिये! ये भी संडे की ही ख़ासियत है। आज के दिन दुकानों पर कम, यहाँ ज़्यादा भीड़ नज़र आती है। यहाँ सुनने को मिलेगा कि कौन है, कहाँ का रहने वाला है। सुबह के वक्त यहाँ लंबी लाइन लगी मिलती है, और हर कुछ मिनट बाद सुनाई देता है, "हाँ, हम बोल रहे हैं, दिल्ली से..."

## नांगला क्या था?

मैं एक शख़्स से मिला जिस ने नीली पैंट, सफ़ेद शर्ट पहनी थी। उस की अजय देवगन जैसी छोटी-छोटी आँखें थीं। वो बोला, "नांगला माँछी से ले कर प्रगति मैदान तक खुला मैदान था। एक ऐसा मैदान जिस में राजाओं को दूर से आते देख लोग विद्रोह में युद्ध का आदेश दे देते थे। ये मैदान ही बना रहा। इस मैदान में कई आविश्कार हुए, जिस का एक रूप बना नांगला माँछी।

## हल्की आँच

सूरज अभी नहीं निकला है। बसेरे में धुएँ की धुँध नज़र आ रही है। पुश्ता पर कई लोगों के घरों पर चूल्हा जल रहा है। लोग अपने चूल्हों के पास बैठ कर चाय की चुस्कियाँ लगा रहे हैं। ये चूल्हे कमरों के अंदर नहीं बल्कि बाहर ही हैं - सड़क के साथ ही चूल्हा है, और यही रसोईघर है। जब लोग गुज़रते हैं तो इसे छूते नहीं, बस देखते हुए निकल जाते हैं।

एक महिला रोटी बना रही है। वो गुँधे आटे की थाली सड़क पर ही रख देती है और खाना बनाने लगती है। उस के पीछे दरवाज़ा है, जिस पर पर्दा नहीं है। जब रसोई ही सडक पर है, तो पर्दा कैसा। सर्दी का मौसम है। उस ने एक कनस्तर में पानी भर के चूल्हे पर चढ़ा दिया है। हल्की आँच पर पानी गर्म हो रहा है। कनस्तर के बगल में एक छः-सात साल का लड़का बैठ कर लकड़ियों को हिलाता जा रहा है जिस से आग की लपट और तेज़ हो रही है। वो बराबर पानी को छू कर देखता जा रहा है कि कितना गर्म है। फिर वो आवाज़ लगाता है, "मम्मी, पानी गर्म हो गया।" तो वो औरत अंदर से आ कर पानी को पलट कर ले जाती है, और कनस्तर को दोबारा पानी से भर देती है।

वहीं गली से लोग गुज़र रहे हैं। पर गलियाँ सिर्फ़ निकलने के लिये नहीं हैं, वहाँ कुछ लोग अपने पैरों से चादर को टाइट कर के ओढ़ कर सो रहे हैं। कुछ लोगों का तो सोने का समय ही सुबह में होता है। लोग उन से कटते हुए अपने रास्ते पर निकल जाते हैं।

## गाड़ी की आवाज़

गाड़ी की आवाज़ कानों में बसी रहती है । सोते समय सपनो में भी गाड़ी दिखती है। ऐसे हैं ये मोहम्मद कासिम जी, जो भोर होते ही अपने रिक्शे को स्नान करवा के अपने नियत स्थान हज़रत निज़ामुद्दीन रेलवे फाटक के पास खड़े होकर सवारी का इन्तज़ार करते हैं।

इनका शरीर पतला दुबला, रंग काला है। ये पैजामा-कुर्ता पहनते हैं। गले मे गमछा डाले रहते है । ये अपने रिक्शे पर टेप या फिर रेडियो एफएम को सुनते हुए निकल पडते हैं सिर्फ़ चाय पीकर। पता नहीं सुबह खाना खाते हैं या फिर शाम को ही खाते हैं। लेकिन सुबह ट्रेन की सवारियो को ढोने के लिए अपनी धड़कनो को रोक -रोक कर साँसे भरते हैं। इनकी उम्र वही पचास या फिर साठ के बीच में हैं।







## एक अफ़रा-तफ़री का माहौल है

सब तरफ़ भीड़ है। पुलिस की रैली कतार में इतमिनान से बैठी हुई है। ज़मीन पर जगह -जगह समान बंधा हुआ रखा है। गलियो में लोगों के चलने का, बातचीत का बहुत शोर है। एक घर के बाहर चारपाई पर दो टीवी और कुछ गठरियों में बंधा हुआ सामन और उसके बीच में एक आदमी गोद में कुछ डायरी और टेलिफ़ोन लेकर बैठा है, और आते जाते लोगों को देख रहा है।

लोगों के चेहरों पर कहीं तो मुस्मान भी है , शायद इस बात का इतमिनान भी है कि हम अकेले नहीं । एक बचा, सात आठ साल का, अपने सामान पर बैठा था और हाथ में एक डण्डी को हिला रहा था। चारों तरफ़ मुड-मुडकर सबको देख रहा था।

ज़्यादातर कोई भी घर में नहीं है, सब अपने-अपने दरवाज़ों, गलियों और सड़क पर खड़े नज़र आ रहे हैं । एक चालिस-पैंतालिस साल की महिला साड़ी पहने हुई है । दीवार से टेक लगाकर खड़ी है और बार-बार अपने पल्लू से सिर को ठीक रही है। आँखों में एक तलाश बनी हुई है । बहुत सारे सवाल हैं पर अपनी ही उधेड़बुन मे लगी हुई है।

एक आदमी के दोनो हाथों में सामान है । एक हाथ में पंखा और दूसरे हाथ में ट्यूब लाइट की फटियाँ हैं। उसकी आवाज़ में गुस्सा है । वो तेज़ आवाज़ में सरकार , एमएलए को ख़ूब गालियाँ बक रहा है। और अपने आसपास में देखते हुए जा रहा है कि कौन उसकी आवाज़ को सुन रहा है, और कौन इस विरोध में उसके साथ है?

एक लगभग साठ साल की महिला पुलिस वालों के झुण्ड के बीच में खड़ी हुइ है और कह रही है, "ओ भईया, आज तो रहने दो... आज तो शादी है! क्या कर रहे हो भइया?" वो एक आस से उनके चेहरो को देख रही है पर पुलिस वालो के चेहरो पर कोई भी भाव नही है। उनके कान पर तो जूँ भी नही रैंग रही।

## न्यौता

एक घर के आगे टेंट लग गया है । शादी होने वाली है। घर की एक महिला गली में न्यौता देने के लिये निकलीं। वो अपनी गली की शुरुआत में पड़ते उन मकानों, जिन में अब रिश्ते कहीं गुम हो गए थे, को छोड कर आगे बढ़ रहीं थीं। दीवार हिस्सों में नीचे पड़ी थी । छतें अब मलबा हो गई थीं । वो इस सब पर नज़र घुमाती हुई, उन घरों की तरफ बढ़ीं जहां पर आज भी पौधों में पानी डाला गया था , और अलग-अलग रंगों के फूल खिल रहे थे। जब वो वहाँ पर पहुचीं और उन्होंने आवाज़ लगाई कि "न्यौता है गीतो का", तो अन्दर की महिला ने मुड़कर देखा । वो घर का सारा सामान लपेटने में लगी थी और छत पर पड़ी टीन को खींच रही थी । यहां पर न्यौता दे कर वओ आगे बढ़ गई ।

## "सब कुछ कंट्रोल में है"

बस्ती के अन्दर जाने वाले रास्तों पर घुसते ही पुलिस वाले गली के मोड़ पर एक कोने मे खड़े होकर बात कर रहे हैं। एक के हाथों मे एक रडियो की तरह दिखने वाला वॉकीटॉकी है, जिसमें झिलमिलाहट के साथ किसी के बोलने की आवाज़ आ रही है।

पुलिस वाले ने आवाज़ का जवाब दिया, "सर वो काम सही चल रहा है। हाँ, सब कंट्रोल में है। जिनके घर टुटने है, वो शुरु हो गये हैं टूटने के लिये। सब कंट्रोल में है। हाँ सर, चारों तरफ़ हमारे आदमी लगे हुए हैं, पूरी बस्ती मे फैले हैं। हाँ सर, ना जी, हाँ सर, जिनके मकान टूटने वाले हैं वो जल्दी से सामान निकाल कर जाने वाले हैं। किसी खाली जगह इकट्ठा कर रहे हैं। ठीक है सर, मैं ये रिपोर्ट देता रहूँगा"। और वॉकीटॉकी में से झिमझिम आवाज़ें फिर से आने लगतीं।

पुलिस कर्मी अपनी पीठ दीवार से चिपकाए, गली के सिरों पे खड़े हैं, जिस से सामान ले कर गुज़रते लोगों के रास्ते में न आएँ, वो रुकें न ।

बिना वर्दी पहने एक सरकारी अफ़सर, और उस के साथ दो पुलिस वाले टोली बना कर इधर-उधर घूम रहे हैं। सरकारी अफ़सर आसपास देखता है। उस के हाथों में कागज़ों का एक बंडल है, जिल्द चढ़ा हुआ । वो आसपास देखता है, फिर अपनी जिल्द चढ़े कागज़ों को देखता है। फिर वो हाथ से इशारा करता है, "एक, दो, तीन!" उस के साथ आए लोग उस के इशारे को देख कर अपने हथौड़े उठा के आगे बढ़ते हैं, उस घर की तरफ़ जिस पर उस ने सब से पहले इशारा किया था ।

## तराई

एक शख़्स कहीं बाहर जाने के लिये तय्यार हो रहे हैं। गली में पड़ी ईंटों और मलबे के ढेर पर बैठे नहा रहे हैं। ईंटों के ढेर के ऊपर किसी छत से निकली सिल्ली को रख कर वो अपनी रोज़ के नहाने की जगह से थोड़ा ऊपर था आज । आज तो उसके नहाने से बहता पानी गली में नहीं बह रहा, बस उसी मलबे में बिखर कर, उसकी तराई कर रहा है ।

## किसी जगह को बसेरा बनने में

किसी जगह को बसेरा बनने में सालों लग जाते हैं, मगर बसेरे को दो दिन में वीरान बना दिया जाता है। धम-धम! हर तरफ कुछ तोड़ा, गिराया जा रहा है। कुछ शख्स घरों को टूटता हुआ देख रहें हैं। घरों के टूटने से उसमें निकली धूल उन शख्सों पर जब आती है तो वो उससे मुँह नहीं फेरते। लग रहा है वो उसे उसे अपने अदंर समाने की कोशिश कर रहे हैं। वो उनके लिए धूल नही है, वो उनकी यादें हैं जो उन्होने उनकी छतों और दीवारों पर लगाई थीं, जो धूल बनकर पूरे वातावरण मे फैल रही है।

अलग अलग तरह के लोग दिखाई दे रहे हैं। कोई अपना बसेरा टूटता हुआ नहीं देख सकता, तो कोई अपने ही हाथों से अपना घर तोड रहे हैं। इसका मतलब कुछ भी हो ,सोच तो एक ही है।

किसी के लिए किसी का घर टूटा है तो किसी के लिए मकान, जो मात्र चार दीवारी से ज़्यादा नहीं था। मगर फीलिंग्स सबकी एक जैसी हैं। दुख तो सबको ही हुआ है , मगर इस दुख के माहौल में कोई अकेला नहीं है।

ज़िदंगी को जीने के लिए किसी कागज़ की ज़रूरत नहीं होती मगर एक कागज़ उस जीने के तरीके को बदल देता है। तब लगता है यहाँ कुछ भी अपना नहीं है। ना हमारी ज़िंदगी, ना उसे जीने का तरीका। बस एक ऑर्डर आएगा और आपको मानना होगा। हर किसी में एक तरह की नमी है, जिसे वो अलग-अलग शब्दो मे बाहर निकाल रहे हैं।

"बोझ तो उतरा, कहते कहते उठ ही गई"
"ज़मीन में रहने के लिए पैरों को गढ़ाना ज़रूरी होता है। आज यह ज़मीन है, कल कोई और होगी।"
"नागँला माछी इसलिए याद रहेगा क्योंकि यह टूट रहा है। इस विस्थापन ने इसे ऐसा छापा है हमारे दिमाग में कि इसपर धूल जमने से पहले हम जम जाएगें।"
"जिदंगी जमना के किनारे बिताने की सोची थी, मगर अब खत्म होने के बाद ही मिलेगें।"

हर कोई अपने दुखों को शब्दों मे पिरो रहा है। किसी जगह मे समय बिताने से जगह यादगार नही होतीं, वो इस तरह की चीजें होती हैं जो उसे यादगार बना देती हैं। चार दिन में नागलाँ माछी खत्म हो जाएगा, मगर जो शख्स यहाँ से जाएंगे वो अपने साथ नागँला को लेकर जाएंगे। नागँला नही रहा तो क्या हुआ ,वो यहाँ से जाने वाले हर शख्सो मे हर समय पनपता रहेगा। और किस्से कहानियों कि रूप मे हमेशा जीता रहेगा। तब नागँला को सांस लेने के लिए नक्शे मे अपने वजूद होने की ज़रूरत महसूस नहीं होगी।










## आजकल

आजकल मुझे नांगला खाली होता सा लग रहा है। जब शाम के समय मैं घर से बाहर टहलने निकलता हूँ तो लोग कम लगते हैं। कुछ समय पहले तो चलने में कितना ध्यान देना पड़ता था, अब बेफिक्री से चलता हूँ। चौखट के बाहर अपना डेरा डाले, अपने में मस्त ताश खेलते आदमी अब कई दिनों से नजर नहीं आए हैं। बाज़ार में लोग कम दिखते हैं। सामान बेचने वाले खाली बस बैठे हुए ही नज़र आते हैं। अंकुर बता रहा था आजकल जब वो खेलने जाता है तो उसे खेलने के लिये ख़ूब जगह मिल जाती है, पहले जैसे जगह घेरने या कम जगह में काम चलाने की ज़रूरत नहीं पड़ती। होटल वाले कहते हैं रात को बहुत खाना बच जाता है, जबकि वो रोज़ के हिसाब से ही बना रहे हैं। दुकानों से टीवी और सीडी किराये पर ले जाना कम हो गया है। शौचालय पहले की तरह साढ़े चार बजे अब नहीं खुलता। एसटीडी वाला कहता है कोई फ़ोन करने आ ही नहीं रहा। शायद जहाँ फ़ोन करते थे, वहाँ से संपर्क बनाने के लिये अब फ़ोन की ज़रूरत नहीं पड़ रही उन्हें...

## बसेरा छोड़ गए

शाम का वक्त था। घरों के बाहर चूल्हे जल रहे थे और कुछ औरतें खाना बना रहीं थीं। मैं अपनी गली से बाहर निकला और पुश्ता की तरफ़ गया। वहाँ कुछ चहल-पहल थी। आदमियों का एक झुंड था, पर थोड़ा फैला-फैला सा था। पास में एक लाइन में तीन रिक्शे खड़े थे। उन में घर का सामान – जैसे कनस्तर, बोरी में भरे बर्तन, झोले में बंधे कपड़े - लदा हुआ था। रिक्शों के आसपास उन का कोई रखवाला या कोई मालिक नज़र नहीं आ रहा था। कुछ देर बाद एक लड़की वहाँ आई। उस के गोल चेहरे पर उस के बाल बिखरे थे। उस ने गुलाबी रंग का सूट और पैरों में चप्पल पहने थे। उस के सर पर एक बक्सा था। वो बक्से को रिक्शे पर रख कर चली गई। अब मैं समझा कि कोई बसेरे को छोड़ के जा रहा है। कुछ देर पाद उस के परिवार वाले भी कुछ न कुछ सामान ले कर रिक्शे की तरफ़ आने लगे। इस तरह तीनों रिक्शे भर गए। वो पाँच लोग थे। उन्होंने रिक्शों पर लदे सामान पर कुछ जगह बनाई और बसेरे को आखरी सलाम देते हुए नइकल गए, किसी नये बसेरे की तरफ़।

## ऐसी हवा चली

ऐसी हवा चली जिस ने लोगों को गुमराह कर दिया। लोग बिना सोचे विचारे टाटा 407 को बुलाते और अपना सामान भर कर चलने को होते। लोग पूछते, "तुम कहाँ जा रहे हो?" तो वो हँसते और कहते, "अब नंगला माँची टूटने वाली है"। लोग ये सुन कर हँसते और कहते, "ये पागल तो नहीं हो गया है! टूटने से पहले भागा जा रहा है!" तो वह जवाब में कहते, "सामान को ठिकाने लगा दें बस। अभी फ़ैमिली यहीं रहेगी। जब टूटेगी तो सारा मुआवज़ा लेकर जाएंगे। कम से कम बीवी-बच्चे परेशान तो नहीं होंगे। झुग्गी-झोंपड़ी का माहौल वैसे ही भद्दा है।"

## साइन बोर्ड

साइन बोर्ड – जो कभी रास्ता बताते हैं, कभी बिन माँगी सलाह देते हैं, कभी नसीहत देते हैं कि ख़ुद को शहर में कैसे पेश किया जाए, और कभी रास्ते से ध्यान खींच कर किसी और दिशा में ले जाते हैं! "यहाँ गैस लाइन है, इसे न खोदें।" "इस चौराहे का नाम है ---।" "दिल्ली रेलवे स्टेशन में आप का स्वागत है।" "अपना घर किराये पर देने से पहले किरायदार की जाँच करवा लें।" "यहाँ पंचर ठीक किये जाते हैं।" एमरजेंसी के बाहर पनपती साँसों के बीच लगा बोर्ड, "एमरजेंसी वॉर्ड"। "प्लीज़ यूज़ मी" लिये कूड़ेदान। हाँ, और एक बोर्ड याद आया जो मेरे पड़ोस में ही लगा है जो किसी प्रॉपर्टी डीलर का आभास कराता है –"यहाँ प्लॉट सस्ते में मिलते हैं"। पर अब आप को क्या बताऊँ, न ही यहाँ कोई प्रॉपर्टी डीलर है, और न ही कोई प्रॉपर्टी! पर बोर्ड अपनी जगह पर लगा ही लगा है।

इन्हीं बोर्डों की तरह एक और बोर्ड भी है, जो सरकार के सफ़ाई अभियान के तहत बटोरी जा रही बस्तोयों के सामने समय–समय पर खड़ा कर दिया जाता है – एक ऐसा बोर्ड जो बिना कुछ कहे, बिना हाथ–पाँव इस्तेमाल किये, अपने पर लगे एक सूचना पत्र के शब्दों को दोहरा देता है, और जो इस बस्ती के सामने भी लगा है। "यह सरकारी भूमि है। इसे खाली कर दो। ये किसी भी समय, या किसी भी दिन तोड़ी जा सकती है।" इसे पढ़–पढ़ कर सब के रोंगटे खड़े हो रहे थे।

रती शाम और उठती रात का पहला पहर था। कोमल भाई इस साइन बोर्ड को पढ़ कर बसेरे में दाखिल हुए। उन के मन में एक तस्वीर बनती तो दूसरी बिगड़ जाती। इन्हीं बनती, ओझल होती तस्वीरों के साथ पतली गलियों से गुज़रते हुए वो घर पहुंचे और हथेली के सहारे घर के दरवाज़े पर टेक लगाते हुए बोले, "मीना, दरवाज़ा खोलो!" अपने पति की आवाज़ को पहचानते हुए मीना ने एकदम दरवाज़ा खोल दिया। कोमल भाई बोले, "ये लो केले। अम्मी कहाँ हैं? उन्होंने खाना खा लिया?" बेटे की आवाज़ सुन कर अम्मी बोलीं, "हाँ बेटा। अभी खाना खिला कर ही बहु मेरे पास बैठी थी। अब तुम दोनों भी खा लो और आराम से सो जाओ।"

कोमल भाई ने मुँह हाथ धो कर, मीना से तहमक माँगते हुए अपना मुँह पोंछा और फिर तहमक कमर पर बाँध लिया। उधर मीना ने बिस्तर पर अख़बार बिछा कर थाली में खाना लगा दिया और कोमल का इंतज़ार करने लगी। कोमल ने बैठते ही रोटी का टुकड़ा तोड़ा। निवाला लबों से लगाते हुए बोला, "मीना, तुम भी खाओ।" फिर कुछ देर रुक कर वो बोले, "मीना, तुम ने कुछ सुना है..."
"नहीं तो," मीना बोली, "क्यों, क्या हुआ?"
"आज आते हुए मेरी नज़र एक नीले बोर्ड पर पड़ी। उस पर लिखा था कि ये सरकारी ज़मीन है। इसे खाली कर दो.."
"अरे आप क्या बात कर रहे हैं," मीना ने कहा। "ये भनक तो कई दिनों से मेरे कानों में पड़ रही है। चाहो तो अम्मी से पूछ लो!"
अब अम्मी से चैन न हुई और वो उठ कर कोमल की बगल में जा कर बैठ गई। बोलीं, "बेटा, कोई नई बात है क्या?"
कोमल बोला, "हाँ माँ। आज नोटिस बोर्ड पढ़ा।"
"पर बेटा, वो तो मंगलवार से लगा हुआ है। उस दिन जब हम बाज़ार से आ रहे थे तो बहु ने मुझे पढ़ाया था। ये तो सब को मालूम है। बेटा, अभी चिन्ता कर के कुछ नहीं होगा। सो जाओ। सुबह की सुबह देखी जाएगी।"

रात का घुप अंधेरा था। खिड़की खुली थी। पर सब स्थिर था। अंदर भी उतना ही अंधेरा था जितना बाहर। सब मिला–मिला लग रहा था। शराब पिये किसी शख्स की कदमों की आहट आने लगी। वो अपनी धुन में कुछ बोल रहा था। एकदम उस की आवाज़ ऊँची हो गई। "कल अगर ये झुग्गी न टूटी तो मेरा नाम भी शराबी नहीं।"
एक दूसरी आवाज़ आई, "ज़रा हाथ लगा के तो दिखाओ!"
"कल देख लेना। कल देख लेना।"

ये आवाज़ें मीना के कानों मे जैसे ही पड़ीं, उस ने अपने बिस्तर से उठ कर कोमल से कहा, "कल बस्ती टूट जाएगी!"
"कोई बुरा सपना देखा है तुमने, चलो अब सो जाओ," इतना कह कर कोमल करवट ले कर सोने को हुआ।

पर आवाज़ फिर आई, और कोमल ने सर उठा कर ध्यान दिया। आवाज़ आ रही थी, "कल बस्ती टूटेगी, टूटेगी। मुझे शराबी मत समझो, आज मैं होश में हूँ।"
कोमल बोला, "कोई पागल शराबी है! परेशान मत हो, चल तू भी यहीं सो जा।"

सुबह मीना और कोमल की आँख लगभग एक ही साथ खुली। दोनों ने खिड़की में से आती सुबह की आवाज़ों को सुन कर समय का अंदाज़ा लगाना चाहा, पर उन की कुछ समझ नहीं आया। एक चुप्पी लिये हलचल की तरंगें खिड़की से कमरे में बह रहीं थीं। कोमल ने झट उठ कर दरवाजा खोला और बाहर झाँका। अपनी गली से गुज़रता हुआ, दूसरी गलियों से निकलता हुआ बाहर की तरफ़ जाने लगा। सभी घरों के दरवाज़े खुले थे। लग रहा था गली में दीवारें कम, दरवाज़े ज़्यादा हैं।

ये सुबह शराबी की बात का हकीकत बनने की सुबह थी। पुलिस कोहरे की तरह बस्ती को घेरे खड़ी थी, और धीरे धीरे हर चीज़ को अपनी लंबी अंगुलियों से छू कर ढंक रही थी। पुलिस की वर्दी को देख कर कोमल एक पुलिस वाले के पास गया और उस से पूछा, "भाई, ये क्या हो रहा है?"
पुलिस वाला बोला, "ये नोटिस बोर्ड पे क्या लिखा है?"
"सर, हमें नहीं पता.." कोमल बोला।
"नहीं पढ़ा तो सुन! बस्ती को खाली कर दो, आज बस्ती टूटेगी।"
कोमल को पुलिस से बात करते देख कुछ और लोग आसपास आ कर खड़े हो गए थे। टूटने का सुन कर सब की नज़रों में पुलिस वाले की छवि नहीं, बल्कि सब के कानों में पिछली रात वाले शराबी की आवाज़ गूँजने लगी, जैसे वो कह रहा हो, "तुम सब मुझे नशे में समझ रहे थे। देखो, ख़ुद ही देखो, कल रात की शराब को सुबह बहते हुए देखो! चलो अब जाओ घर खाली करो, पुलिस के तुम्हारे ये सारे बाप यहाँ यूँ ही नहीं खड़े हैं!"

कोमल बस्ती की तरफ़ मुड़ा अंदर जाती गली को देख रहा था। आज तक जिस गली में साइकल से बड़ी कोई गाड़ी दाखिल नहीं हुई थी, वहाँ आज होने जा रही थी। ये पहली बार होगा। और ये पहली गाड़ी बुल–डोज़र होगी, जिस के गुज़रने के बाद किसी और के गुज़रने की गुंजाइश नहीं रहेगी।









## महकती दीवारें

सूरज आकाश पर चढ़ चुका था। भभकती गर्मी बस्ती में बतलाते लोगों को झुलसा रही थी। अपनी कमर से गमछा, तेहमत बाधें हुए आदमी झुंड बनाऐ खड़े, उस बेरहम बुलडोज़र के होते वार को देख रहे थे। दूर किसी और जगह फिर एक मकान गिरा, जिसके गिरते ही टूट कर रेत और बदरपुर की धूल के छोटे–छोटे कण हवा में तैर रहे थे। वहाँ धड़ाम से कोई छत गीरी, जिसकी डरा देने वाली आवाज़ ने रौंगटें खड़े कर दिये।

लगातार जगह जगह बस्ती में खड़े लोगों में कुछ खुसूर–फुसुर हो रही थी। एक बिजली सी बार–बार ज़मीं पर गिरती, और दरों–दीवार की ख़ूबसूरती को ध्वंस कर देती, फिर किसी और के घर का नम्बर लग जाता।

देखते ही देखते बस्ती एक उजड़ेपन, भयभीत होने और असाहयता का रूप लेती जा रही थी। रास्तों पर अभी कुछ चीज़ें फैली पड़ी थीं। काफ़ी तोड़–फोड़ होने पर घर छोड़ कर जा रहे लोग छोटा–मोटा फ़ाल्तू का सामान इकट्ठा कर के कबाड़ियों को बेच रहे थे। टूट रही बस्ती के कोनों–कोनों में, गलियारो में, कबाड़ी अपनी साइकल या फिर कान्धे पर टाट का बोरा डाले, "कबाड़ी वाले कबाड़ी वाले" की आवाज़ मारते हुऐ गस्त लगा रहें थे। हाथों में टूटी हुई प्लाटिक की दिवार–घड़ी को लिए भागता हुआ एक नन्हा अधनंगा बच्चा कबाड़ी के कमीज़ के किनारों को खींच कर बोला, "ये कितने की लोगे?" उसकी तरफ़ पलट कर उसने कमर बिना झुकाए ही घड़ी को लिया और अपने बोरे का मुहँ खोला। उसमे घड़ी डाल कर नन्हें बच्चे को एक रुपये का सिक्का दे दिया। बच्चे की हथेली में रखा एक रुपये का सिक्का धूप में कुछ लम्बी–लम्बी चुनदियाँ देने वाली रोशनी की चपटी किरणों की तरह चमक रहा था। फिर रुपये को मुट्ठी मे बन्द कर के वो लौट गया।

कबाड़ी ने फिर से गस्त लगाना शुरु कर दिया। उसकी तरह बहुत से कबाड़ी बस्ती में कौड़ियों के दाम चीज़ें लेते फिर रहे थे। टूटी मुन्डेरों पर चीलें किलका रहीं थीं, जैसे रेगिस्तान में हड्डियों के ढाँचें को देख कर आसमान में उड़ते गिद्ध और चीलें आँखें गाढ़े हुए चिल्ला–चिल्ला कर विलाप मना रहे हों।

खाना पकाने की ये जगहें, ये खेलने–खिलाने के आंगन, ईंटों के भारी टुकड़ो में दब चुके थे। कुछ बचे हुए घरों मे रहते लोग डरे हुए से थे। और कुछ सीने मे दफ़न गुस्सा लिए, सर पकड़े, किसी का शोक मनाते हुए से दरवाज़ों, चौखटों, दीवारों से टेक लगाए बैठे हुए थे।

उमस–भरी दोपहरी हो चली थी। करहाती आवाज़ लगाता अधेड़ उम्र का बूढ़ा आदमी आँखों पर मोटा शीशे का चश्मा पेहने हुए आया। उसके गाल अंदर की तरफ़ पिचके हुऐ थे। डार्क भूरे बाल और माथे पर गाढ़ी लकीरें छपी हुई थीं। मुड़ी हुई टाँगों से चलता हुआ वो अपने कन्धे पर प्लासटिक के दस–बारह लिटर के डब्बे में आम का अचार बेच रहा था।

वो नांगला बस्ती में कई बार पहले भी आ चुका था। लेकिन अब उसे अफ़सोस था कि यहाँ से उसका दाना पानी उठ जाएगा। बस्ती में उसकी कर्रहाती आवाज़ को शायाद ही कुछ लोगों के कान सुन रहे थे।

चौंका देने वाली तोड़–फोड़ की आवाज़ें रुक–रुक कर आ रहीं थीं। गिरे हुए छप्पर और बाँस के डंडो को निकाल कर किसी ने रस्सी में बांधा हुआ था। सिमेंट और बदरपुर से चिनी दीवारों का मसाला छूट कर मोटी कंकड़ियां बन कर बिखरा हुआ था। उन ईंटों के बड़े–बड़े टुकड़ों के सामने बने घर की दीवार से कमर लगा कर बैठे एक शख्स के बालों में बस्ती के टूट रहे मकानों की धूल जमी हुई थी। उसकी कमीज़ और पैंट पर भी मिट्टी की मोटी लकीरें और धब्बे बने हुऐ थे। उसके गले में धारियों वाला गमछा था। अपने हाथों मे एक–फुट लम्बी लकड़ी की फट्टी लिए, हथेलियों के बीच में दबा कर वो फट्टी को हौले हौले घुमा रहा था और फट्टी मे लगी कीलों को नाख़ूनों से नोच रहा था। उसकी उंगलियाँ चूल्हे की खरोंचों में सनी हुई थीं।

जब सामने के उजड़े हुए अपने पड़ोसी के घर को वो निगाह बाँध कर देख रहा था तो खयालों में अकेला ही बुदबुदाता हुआ मुसकुरा कर बोला, "सब तोड़ दिया और तोड देंगे"। उसकी इस मुस्कुराहट के पीछे कई सवाल खड़े थे। वो ये कहता हुआ ज़रा भी संकोच नहीं करता की, "बसाने में बहुता वक्त लगा है, पर उजाड़ने मे चन्द दिन, एक बसी बसाई बस्ती को देखते देखते वीरान कर दिया"।

ये कह कर उसने जेब से बीड़ी निकाल कर जालाई। बीड़ी का कश मारते हुए टूटे घर को बड़ी बेचैंदगी से देखा और हाथों में लकड़ी की फट्टी ले कर उसमें लगी कीलों को दोबारा नोचना शुरु कर दिया। जब वो गुमसुम सा बैठा था तो उसके सामने वाले घर की टूटी दीवारों के टुकड़ो में दबी प्लास्टीक की तिरपाल को खींचती हुई एक औरत ने उसको किसी ख़्याल से हटा कर कहाँ, "अरे उठा लूँ क्या?" इस आवाज़ से वो बौखलाहट मे देखने लगा। उस औरत की कमर पर एक बड़ा सा कट्टा था, जिसमें उसने कुछ पन्नी और कगज़ो को भर रखा था। मुहँ फाड़ कर उस औरत ने अपना पल्लु कमर में ठूस कर फिर से बोला, "सुनता नहीं क्या? उठा लूँ ?" अपने ख़्यालों की पीड़ा से बाहर आते ही उसे हकीकत महसूस हुई और वो सकपकाया हुआ सा बोला, "अभी मत उठा, मालिक नहीं हैं रे"। और वो औरत ये कहती हुई चली गई, "बाद में आ जाऊंगी"।

एक टूटे हुए कोने को देख, उसकी दीवार पर धुँए की छाई हल्के पीले और डार्क रंग के फैले हुए निशानों को देख कर पता चल रहा था कि यहाँ कोई बरामदा रहा होगा। वो दीवार खाना पकाने के चिकने छौंक की छींटों की कई परतों और हल्दी मिर्च के मसालों की महक से अभी ज़िंदा थी। बाकी सब तो तहस–नहस हो चुका था। जो घर बचे थे, उनमें रहने वाले लोग डरे हुए से अपना सामान बान्धे, बस्ती छोड़ने की तय्यारी करते हुए अपनी सांसों को भी गिन गिन कर ले रहे थे।

## "आपके लिये, आपकी सहायता के लिये"

"आपके लिये, आपकी सहायता के लिये"। ये रिंग रोड पर खड़ी एक गाड़ी के पीछे लिखा था। वहाँ से एक आवाज़ उठी, "आज ये झुग्गी खाली कर दो, आज ये टुटेंगीं"।

ऐसा सुनकर लोग और भी चौकन्ने हो गये। ये ख़ौफ़नाक ख़बर थी जो बहुत जल्दी बस्ती में फैल गई। अब क्या! हर घर से एक-एक शख़्स निकला सम्पूर्ण जानकारी लेने के लिये। तो पता चला कि पुलिस और बुलडोज़र दोनों ही प्रगती मैदान के गेट नम्बर एक पर अपने आपको सजा संवार रहे हैं। तो सुनी-सुनाई बातों की ख़बर लेने के लिये लड़कों की एक टोली वहाँ जाकर देखने लगी। वहाँ दो हज़ार की तदाद मे गोल टोपी और खाकी वर्दी वाले ही नज़र आ रहे थे। अब तो पूरी बस्ती में झूठी सनसनी हटकर सच की सनसनी फैल गई।

अब क्या! फ़ोन पर फ़ोन होने लगे। मानो जैसे कोसों सब दूर रहने वालों, काम पर जाने वालों, सर्विस करने वालों, अपने रिश्तेदारों - सब को फ़ोन खड़काने में जुट गये। ये बताने के लिये कि सच में ये झुग्गी टूटेगी। हर आवाज़ एसटीडी में सुनाई देने लगी, और इतनी बार सुन के अब ये आवाज़ सच सी लग रही थी।

कुछ क्षण बाद पुलिस इस तरह से गलियों मे फैल गई कि मानो बहुत दूर से आ रही हो। इतने में एक-एक करके सजे-सजाये सभी पुलिस-कर्मी मेन गेट से अन्दर आना आरम्भ हुए। दो पुलिस-कर्मी घोड़ों पर सवार होकर नाल की टक-टक की आवाज़ को मारते हुए अंदर दाखिल हो गये। सारे दुकान वालों को सुचना पत्र देकर वापस बाहर को चले गए। पैदल पुलिस वालों ने चल-चलकर अंदर गलियों में अपने लिये छोटे-छोटे ठिकाने बनाना शुरु किया। वो ठिकाना बना रहे थे, परन्तु झुग्गी वाले एक ठिकाने को ठुकरा रहे थे। वो तो किसी दूसरे बसेरे की तलाश में रोड पर जमा हो रहे थे। जब अशियाना छिनता है, तो लोग अशिकी, प्यार, सब कुछ भूल कर अपने में ही खो जाते हैं।

## कहीं बसने की जल्दी है

कहीं बसने की जल्दी है, तो कहीं पर आस लगाए बैठे हैं। किसी ने अपना बसेरा ढूँढ लिया है, तो किसी की समझ में नहीं आ रहा है कि वो क्या करे? जहां देखो हर कोई किसी न किसी काम में व्यस्त दिख रहा है। कोई सामान बांध रहा है, तो कोई अपनी कीमती चीज़ों में कुछ चुन-चुनकर खोज रहा है। अपने सामान को एक तरफ़ इकट्ठा करके किसी आस में बैठे लोग और कुछ औरतें और बचे भी।

कई घर तो तोड़े जा रहे हैं, और कई अभी तोड़े जाने हैं। सर्वे अभी भी चालू है। लोगबाग "साहब-साहब" बोलकर सर्वे वालों के आगे-पीछे घेरा लगाये खड़े है। अपने हाथों में घरों के कुछ कागज़ात, राशन कार्ड लिये अपने-अपने प्रूफ़ दिखा रहे हैं। लोग कह रहे हैं, "साहब देख लो, कुछ हो जाये तो... अब तो आप ही कुछ कर सकते हो"। साहब आगे चलते हुए कहते हैं, "अरे भई हम भी क्या कर सकते हैं? बड़े-बड़े अफ़सर तो वहाँ पर बैठे हुये हैं। हमारे हाथ मे कुछ नहीं है।"

ना जाने कौन सी आस लगाये बैठे हैं लोग - जो होना है वो तो होगा ही। इस कहावत को सोचते हुए कुछ लोगों में कुछ बे-फ़िक्री भी दिखाई पड़ रही है। लोगों का पानी भरना, कपड़े धोना, ऐसा लग रहा है कि जैसे ये आज के इस दिन से अंजान हैं। कुछ शख़्स तो रेडियो पर मैच की कमेन्टरी सुन रहे हैं। जिनके घर तोड़े जा रहे हैं, पुलिस वाले उन्हीं के साथ में बातें किये जा रहे हैं। आपस मे डण्डा लिये वो अपने में भी बातें कर रहे हैं। जगह-जगह मकानों को तोड़ते हुए लेबर अपनी जान लगाकर बड़े से हथौड़े को दीवार पर मार रहे हैं। एक तरफ़ अपना घर टूटने के मायूसी है, तो दूसरी तरफ़ लोग अपनी बातों मे मशगूल हैं। तख़्त पर बैठे ताश के पत्तों से अपने रोज़ाना के इस समय के साथ अपने दाँव चल रहे है। इनकी इस गपशप में मानो जैसे इनकी आँखो में कुछ ओझल है। या ये बे-चिन्ता एक जगह मे बैठकर बेफ़िक्र ताश के पत्तो मे खोये हुये है।

कहीं कुछ हरकरत में है, तो कहीं पर कुछ सामान्य गति में काम करते लोग दिखाई दे रहे हैं। आज भी कुछ फेरी वाले गलियों मे घूम रहे हैं। पर आज वो साइकल पर या रेहडी पर नहीं, पैदल ही बोली लगाये गलियों में घूम रहे हैं। ज्यादातर कबाड़ी वाले ही घूमते दिखाई दे रहे हैं। क्योंकि जो बिखरा हुआ सामान है, जैसे लोहा, प्लासटिक वग़ैरह, इन सामानों को लोगबाग ले जाने की बजाय इन्हें कबाड़ी वालों को बेचने





## क्या नांगला आज तोड़ दी जाएगी?

नांगला में दाख़िल होते ही कई बातचीत की आवाज़ें मेरे कानों में पड़ीं। एक हलचल थी। और एक आस भी कि कोई तो हमारी ऊपर वालों से सिफ़ारिश कर दे और हमारा बसेरा उठे ना। पर लोग फिर भी अपना घर खाली कर रहे थे, और अपना सामान अपने घरों के बाहर रख रहे थे।

मैं आगे चलती गई तो देखा एक औरत बैठी अपने कपड़े धो रही है। क्या उसे पता नहीं था? वो इतना आराम से कैसे लग रही थी? वो अपने मन की हलचल को बाहर नहीं आने दे रही थी।

कुछ और क़दम आगे चल कर मैं ने देखा एक बुज़ुर्ग आदमी और दो छोटे बचे अपना सारा सामान घर से बाहर निकाल रहे थे।

कुछ ही दूर आगे मुझे ढोलक बजने की आवाज़ सुनाई दी। फिर मैं ने देखा कुछ रिवाज़ वहाँ किये जा रहे थे। बहुत लोग इकट्ठा थे। ढोलक ज़ोर से बज रहा था। एक आदमी जमा भीड़ के बीचों-बीच नाच रहा था। नये घर भेजी जा रही दुल्हन का चेहरा आँसुओं से भरा था।

मैं आगे को बढ़ती रही। लैब गली के कोने पर ही था। लैब बंद था, मैं बाहर खड़े हो कर इंतज़ार करने लगी। गली एकदम चुपचाप थी। पिछली गली की तरह इस में कुछ हलचल नहीं थी। लैब के बगल वाले घर में बहुत लोग जमा हुए थे। रोज़ बजने वाला डेक आज चुप था।

लैब के ऊपर रहने वाली आंटी से मुलाकात हुई। वो मुझ से बातें करने लगीं। उन्होंने बताया कि उस शाम भी किसी की शादी है। लड़की की तो हल्दी-बेसन लगने की रसम भी हो चुकी है।आंटी बहुत दुखी थीं, और कहे जा रहीं थीं, "इतने कम समय में हम कहाँ जाएंगे?" हम ने कुछ देर बात की। फिर मैं वापस सड़क की तरफ़ चल दी।

कोई अपने घर की छत उखाड़ रहा था। दो लोग ध्यान से अपना कांच का सामान पैक कर रहे थे।

सभी बातें कर रहे थे। किसी ने कहा, "अब हम क्या करेंगे?"
किसी ने कहा, "क्या नेता लोग कुछ नहीं कर सकते?"
कोई कह रहा था, "लगता नहीं ये बसेरा अब ज्यादा दिन बचेगा"।

कोई पुलिस को कोस रहा था और किसी ने कहा, "वो तो सिर्फ़ ऊपर से भेजे गये ऑर्डर का पालन कर रहे हैं"।
कोई बोला, "यहाँ से वो ग़रीबों की दुहाई ले के जाएंगे"।

बाहर सड़क के किनारे टेम्पो की लाइन लगी थी। एक लड़का एक टेम्पो में खड़ा था। वो सब से भारी सामान को सब से नीचे लगा रहा था। तीन छोटी लड़कियाँ आई, और उसे कुछ और सामान दे दिया। लड़के ने सामान ले कर उसे उसकी बनाई जगह में रख दिया।

लोग बसेरे और सड़क के बीच के मैदान में अपने सामान के साथ बैठे थे। कुछ लोग खाट बिछा कर बैठे थे।
मेरे पीछे से एक आवाज़ ने पूछा, "यहाँ क्या कर रहे हो?"
मैं ने मुड़ के देखा तो पुलिस जी में तीन पुलिस वाले बैठे थे। मैं ने कहा, "मैं अपने किसी दोस्त का इंतज़ार कर रही हूँ"।

"हम पूछ रहे हैं तुम यहाँ कर क्या रही हो?"
मैं ने बताया कि हमारा यहाँ एक लैब है, मैं वहीं जा रही हूँ।
फिर मैं ने पूछा, "क्या आज नांगला तोड़ दी जाएगी?"
वो बोले, "बेटा, अभी नहीं, अभी समय है"।
मैं उन्हे देख रही थी, कि ये मुझे झूठा दिलासा क्यों दे रहे हैं?
तभी उन के मोबाइल की घंटी बजी। वो व्यस्त हो गए और मैं आगे को चलने लगी।